193

भारत दुर्दशा

८१२.२
हरि/भा-१

विश्व विद्यालय प्रकाशन
गोरखपुर

भारतेन्दु हरिश्चन्द्र

कृत

भारतदुर्दशा

संपादक

लक्ष्मीसागर वार्ष्णेय

हिन्दी विभाग, यूनिवर्सिटी, इलाहाबाद

विश्वविद्यालय प्रकाशन

मोतीलाल मोदी एंड संस

गोरखपुर

विश्वविद्यालय प्रकाशन

प्रकाशक,

पुरुषोत्तमदास मोदी, एम० ए०

मोतीलाल मोदी एंड संस

गोरखपुर

प्रथम संस्करण ३०००

जनवरी–१९५३

मूल्य–डेढ़ रुपया

मुद्रक,

पं० पृथ्वीनाथ भार्गव

भार्गव भूषण प्रेस, गायघाट, बनारस

विषय-सूची

विषय	पृष्ठ
भूमिका	१–१९
भारतवर्ष मे नाट्य-कला	१
हिन्दी नाट्य-साहित्य का इतिहास और भारतेन्दु की नाट्य-रचनाएँ	२
भारतेन्दु की सक्षिप्त जीवनी	७
भारत दुर्दशा . समीक्षा	८
भारत दुर्दशा	२१–४९
टिप्पणी	५१–८४

भूमिका

भारतवर्ष में नाट्य-कला

जिस प्रकार एक व्यक्ति के जीवन मे मनोरजन का महत्वपूर्ण स्थान माना जाता है, उसी प्रकार प्रत्येक राष्ट्र के पास अपनी राजनीतिक, धार्मिक और सामाजिक परपराओं के अनुसार मनोरजन के साधन होते हैं। नाटक इसी प्रकार के अनेक साधनो में से एक साधन है। भारतवर्ष मे काव्य के दो भेद माने गए है—श्रव्य काव्य और दृश्य काव्य। श्रव्य काव्य का आनन्द सुन कर उठाया जाता है और दृश्य काव्य का आँखो द्वारा। आँखो देखी बातो का, स्वभावत., हृदय पर अधिक स्थायी प्रभाव पड़ता है। इसी दृश्य काव्य के अंतर्गत नाटक की गणना की जाती है। सस्कृत मे दृश्य काव्य को ही रूपक के नाम से पुकारा गया है। रूपको के साथ-साथ उपरूपक भी माने गए हैं। रूपक के दस भेद हैं :—**नाटक, प्रकरण, भाण, प्रहसन, डिम, व्यायोग, समवकार, वीथी,** अंक और **ईहामृग**। उपरूपक अठारह प्रकार के माने गए है :—नाटिका, त्रोटक, गोष्ठी सट्टक, नाटय-रासक, प्रस्थान, उल्लाप्य, काव्य, प्रेङ्खण, रासक, संलापक, श्रीगदित, शिल्पक, विलासिका, दुर्मल्लिका, प्रकरणिका, हल्लीश और भाणिका। सस्कृत साहित्य-शास्त्र के प्रणेताओ ने इन विविध रूपकों और उपरूपकों के लक्षण निर्धारित किए हैं। वस्तु-संगठन, नायक और रस—प्राचीन भारतीय नाटय-शास्त्र के अनुसार ये तीन तत्व नाटक के प्रधान अंग माने गए हैं। इन नियमो का पालन करते हुए तीसरी-चौथी शताब्दी पूर्वेसा से अनेक नाटककारों ने अपनी नाटय-कृतियाँ प्रस्तुत कीं। इसी परंपरा में भास, कालिदास, भवभूति, शूद्रक, हर्ष, विशाखदत्त, राजशेखर आदि अनेक विश्व-विख्यात नाटककार हुए। इस प्रकार आज से लगभग दो सहस्र वर्ष पूर्व भारतवर्ष मे नाटय-कला का जन्म और विकास हो चुका था। अन्य देशों से बहुत पहले यहाँ वह अपनी पूर्ण उन्नतावस्था को पहुँच गई थी।

हिन्दी नाट्य-साहित्य का इतिहास और भारतेन्दु की नाट्य-रचनाएँ

ईसा की सातवी शताब्दी मे हर्षवर्धन की मृत्यु के बाद भारतीय राजनीतिक जीवन छिन्न-भिन्न और अराजकतापूर्ण हो गया था और शीघ्र ही बढते हुए इस्लाम धर्म के साथ भारतवर्ष पर मुसलमानी आक्रमण होने लगे। देश की अराजकतापूर्ण परिस्थिति से आक्रमणकारियों ने भरपूर लाभ उठाया और अनेक घोर युद्धो और कठिनाइयों के बाद उन्होने अपना राज्य स्थापित कर लिया। उस समय देश मे अभिनय-कला के दो प्रधान केन्द्र थे, राज्य-सभा और देव-मन्दिर। आक्रमणकारियों द्वारा दोनों स्थानो का विध्वस होने से नाटच-कला के प्रचार को यथेष्ट आघात पहुँचा। वैसे भी इस्लाम धर्म नाटच-कला की अनुमति नही देता। प्रारभिक आक्रमणकारियो मे धार्मिक जोश भी बहुत था। बाद को मुगल बादशाहो ने सगीत तथा अन्य ललित कलाओ को आश्रय अवश्य दिया, किन्तु नाटक का वे फिर भी आदर न कर सके। इस प्रकार भारतीय इतिहास के मध्य-युग मे नाटच-कला उठ-सी गई। आधुनिक खोजो के फल-स्वरूप चौदहवी शताब्दी से लेकर उन्नीसवी शताब्दी के लगभग मध्य तक कुछ नाटक नाम से पुकारी जाने वाली रचनाओ का पता चला है, जैसे, विद्यापति कृत 'रुक्मिणीहरण' और 'पारिजातहरण'-कृष्णजीवन कृत 'करुणाभरण' हृदयराम कृत 'हनुमान नाटक', निवाज कृत 'शकुतला नाटक', ब्रजवासीदास कृत 'प्रबोध चन्द्रोदय नाटक' आदि। परन्तु नाटक की रीति के अनुसार उन्हे 'नाटक' नाम से अभिहित नही किया जा सकता। उनमे पात्र-प्रवेशादि बाते नही पाई जाती। वास्तव मे नाटच-कला के दुर्दिन मे उनका जन्म हुआ था। विदेशी जाति के सम्पर्क से उन्हे कोई प्रोत्साहन न मिला। साधारण जनता मे पौराणिक और कुछ ऐतिहासिक व्यक्तियों से सबधित लीलाओ और रूपक के कुछ हीन और भ्रष्ट रूपो का प्रचार अवश्य बना रहा।

उन्नीसवी शताब्दी मे हिन्दी-भाषा-भाषियो का फिर एक विदेशी जाति से सपर्क स्थापित हुआ। यह जाति ऐंग्लो-सैक्सन सस्कृति की सदेशवाहक ॲगरेज जाति थी। अपना राज्य स्थापित कर लेने के बाद अँगरेजों ने नवीन या आधुनिक शिक्षा का प्रचार किया और अनेक स्कूल, कॉलेज

और अत मे यूनिर्वासिटियाँ स्थापित की। भारतेन्दु का जिस समय उदय हुआ उस समय इस प्रकार की शिक्षा-सस्थाएँ स्थापित हो चुकी थी। इन सस्थाओ मे अन्य अनेक विषयो के अतिरिक्त अँगरेजी साहित्य का भी अध्ययन होता था। अँगरेजो के पास अपना समुन्नत नाटच-साहित्य था। साथ ही अँगरेजो ने अपने मनोरजन के लिए कलकत्ता, बबई, मद्रास पटना आदि बडे-बड़े नगरो मे अभिनय-शालाएँ भी स्थापित की थी। इसलिए एक ओर तो भारतवासियो को अँगरेजी साहित्य के अध्ययन- और अँगरेजो के सपर्क से प्रोत्साहन प्राप्त हुआ, दूसरी ओर स्वय भारत वासियो के लिए नाटच-रचना नई नही थी, उसकी परपरा बीच मे भले ही टूट गई हो। इसके साथ-साथ उन्नीसवी शताब्दी उत्तरार्द्ध मे नवोत्थान-कालीन भावना भी काम कर रही थी। इन सब कारणो के फलस्वरूप अनुकूल वातावरण पाकर हिन्दी नाटच-साहित्य का जन्म हुआ। जहाँ तक हिन्दी नाटच-साहित्य के क्रमबद्ध इतिहास से सबध है, उसका सूत्रपात उन्नीसवी शताब्दी उत्तरार्द्ध मे ही माना जा सकता है। और यह समय भारतेन्दु के उदय का समय था। आधुनिक हिन्दी साहित्य के अन्य अनेक रूपो का जन्म देने के साथ-साथ उन्होने हिन्दी नाटच-साहित्य को भी जन्म दिया।

भारतेन्दु से पूर्व रीवाँ के महाराज विश्वनाथसिह अपना 'आनन्द-रघुनन्दन नाटक' लिख चुके थे। इस नाटक मे राम-कथा का वर्णन है। नाटक पद्यात्मक अधिक और ब्रजभाषा गद्य मे है। यह नाटक छद, गद्य, पात्र-प्रवेशादि तथा अन्य नाटच-लक्षणों से समन्वित आगामी नाटच-युग का अग्रदूत है। विशुद्ध नाटक रीति के अनुसार भारतेन्दु के पिता गोपालचन्द्र उपनाम गिरिधरदास (१८३३–१८६०) ने 'नहुष' नामक नाटक की रचना १८५९ मे की, यद्यपि उसकी पूरी प्रति अब अप्राप्य है। तत्पश्चात् १८६१ मे राजा लक्ष्मणसिह ने कालिदास कृत 'शकुन्तला' का हिन्दी में अनुवाद किया। स्वय भारतेन्दु हरिश्चन्द्र ने १८६८ मे चौरकवि कृत सस्कृत रचना 'विद्या-सु दर' का बगला के माध्यम द्वारा अनुवाद किया। १८७२ में कृष्ण मिश्र के 'प्रबोध चन्द्रोदय' के तृतीय अक का 'पाखड विडंबन' के नाम से, १८७३ मे काचनकवि कृत 'धनजय-विजय' (व्यायोग) का,

१८७५ मे राजशेखर कृत 'कर्पूर मजरी' (सट्टक) का, १८७८ मे संस्कृत के नाटककार विशाखदत्त कृत 'मुद्रा राक्षस' और अत मे १८८० के लगभग शेक्सपियर कृत 'Merchant of Venice' का 'दुर्लभ बन्धु' अर्थात् 'वंशपुर का महाजन' (अपूर्ण) नाम से अनुवाद भारतेन्दु द्वारा प्रस्तुत हुए। मौलिक रचनाओं मे उन्होने 'वैदिकी हिसा हिसा न भवति' (१८७३)—प्रहसन, 'सत्य हरिश्चन्द्र' (१८७५)—नाटक, 'श्रीचद्रावली' (१८७६)—नाटिका, 'विषस्य विषमौषधम्' (१८७६)—भाण, 'भारत जननी' (१८७७)—नाटचगीत, 'भारत-दुर्दशा' (१८८०, बा० ब्रजरत्नदास के अनुसार, १८७६)—नाटचरासक, 'नीलदेवी' (१८८१)—गीति-रूपक, 'अंधेर नगरी' (१८८१)—प्रहसन, 'प्रेमजोगिनी' (१८७५, अपूर्ण)—नाटिका, और 'सती प्रताप' (१८८३, अपूर्ण)—गीति-रूपक की रचना की। अपने संस्कृत और अँगरेजी नाटच-शास्त्र के अध्ययन के आधार पर उन्होने हिन्दी के नाटच-शास्त्र, 'नाटक' (१८८३), का निर्माण किया। इस प्रबध मे उन्होंने नाटच-शास्त्र का देशकाल और अवस्था के अनुसार परिवर्तित दशा के प्रकाश मे अध्ययन कर प्राचीन और नवीन का समन्वय उपस्थित किया है। इस प्रकार भारतेन्दु ने सामाजिक एव राजनीतिक, पौराणिक और प्रेमतत्व पर आधारित नाटक लिखे। ये तीन भाग तीन उद्गमों के समान हैं जिनसे तीन विभिन्न नाटकीय धाराएँ प्रवाहित हुई—सामाजिक और राजनीतिक, पौराणिक, और प्रेम-संबधी। आगे चल कर श्रीनिवासदास ने 'रणधीर और प्रेममोहिनी' (१८७८), 'तप्तासवरण' (१८८३) और 'सयोगिता स्वयवर' (१८८५) की, राधाकृष्णदास ने 'दुखिनी बाला' (१८८०), 'पद्मावती' (१८८२), 'धर्मालाप' (१८८५) और 'महाराणा प्रताप' (१८९७) की, किशोरीलाल गास्वामी ने 'मयंकमंजरी महानाटक' (१८९१) की, राव कृष्णदेव शरणसिह ने 'माधुरी रूपक' की, तथा अन्य अनेक नाटककारो ने अनेकानेक मौलिक एवं अनूदित नाटकों की रचना कर भारतेन्दु के कार्य को आगे बढाया और हिन्दी साहित्य के इस अग को पुष्ट किया। सामाजिक एव धार्मिक सुधारवादी आदोलनों और राजनीतिक चेतना के फलस्वरूप उत्पन्न आदोलनो ने तत्कालीन नाटच-साहित्य के लिए

उपकरण प्रस्तुत किए। लेखकों ने भारत के प्राचीन गौरव, तत्कालीन राजनीतिक, आर्थिक, धार्मिक, सामाजिक एवं नैतिक अधोगति, भारतीय नवोत्थान की भावना, आदि को अपनी विविध रचनाओ का विषय बनाया। हिन्दी के तत्कालीन नाट्य-साहित्य मे देश की सम्यक् उन्नति के लिए बलवती आकाक्षा प्रकट हुई है। रचना-पद्धति की दृष्टि से भी भारतेन्दु के नेतृत्व में हिन्दी के नाटककारों ने न तो प्राचीन नाट्य-शास्त्र और न नवीन पाश्चात्य नाट्य-शास्त्र का अन्धानुकरण किया। तत्कालीन सुहृद्-समाज की रुचि के अनुकूल उन्हे जो-जो बाते अच्छी लगी वे बाते उन्होने दोनो नाट्य-पद्धतियों से ग्रहण की। नाटककारों ने प्राचीन पद्धति के अनुसार नाटकों की रचना अवश्य की, किन्तु नवीन और प्राचीन के अनुसार मिश्र-पद्धति के आधार पर, अथवा केवल नवीन पद्धति के आधार पर भी नाटकों की रचना बराबर हुई। यह कहना अनुपयुक्त न होगा कि हिन्दी की नाट्य-पद्धति निरंतर नवीनोन्मुख ही होती गई। बीसवी शताब्दी मे हिन्दी नाट्य-साहित्य पूर्णतः पाश्चात्य नाट्य-पद्धति के प्रभावातर्गत आ गया है। इसके अतिरिक्त यह बात भी स्मरण रखनी चाहिए कि अत्यधिक प्रचारात्मकता आ जाने, पारसी थिएटरों से प्रभावित होने, जनता का अशिक्षित होने, हिन्दी रगमंच का अभाव होने आदि अनेक कारणों से हिन्दी नाटकों का उतनी ही शीघ्रता के साथ पतन हुआ, जितनी तीव्र गति से उसका उत्थान हुआ था। साथ ही भारतेन्दुकाल मे नाटकों के केवल बाह्यरूप पर ही विदेशी प्रभाव पडा। उस समय उसके आन्तरिक रूप मे कोई परिवर्तन न हो सका। लेखकों का दृष्टिकोण अधिकाश मे आदर्शपूर्ण बना रहा। पात्र कभी गिरते-उठते नही दिखाई देते, आदि से अत तक उनका एक ही रूप बना रहता है। बुरा पात्र आदि से अंत तक बुरा बना रहता है और अच्छा पात्र आदि से अंत तक अच्छा बना रहता है। रसात्मकता और काव्यत्व का प्राधान्य भी उनमे मिलता है। नाटकीय कथावस्तु भी एक निश्चित मार्ग पर चलती हुई मिलती है; उसमे आरोह-अवरोहका अभाव मिलता है। किन्तु इतना सब कुछ प्राचीन होते हुए भी भारतेन्दु तथा उनके समकालीन नाटककारों ने हिन्दी नाट्य-साहित्य को नवीन दिशा की ओर मोडा।

मौलिक नाट्य-साहित्य की रचना के अतिरिक्त भारतेन्दु-युग मे अनूदित नाटकों का निर्माण भी हुआ। सस्कृत नाटकों के अनुवाद-कार्य का श्रीगणेश राजा लक्ष्मणसिह के 'शकुन्तला' नाटक से होता है। आगे भी यह परपरा बराबर बनी रही। सस्कृत नाटको के अतिरिक्त अँगरेज़ी नाटको के भी अनुवाद हुए। सर विलियम जोन्स द्वारा 'शकुन्तला' का अँगरेजी मे अनुवाद हो चुका था। और अँगरेजो ने अपने मनोरजन के लिए भारत के बडे-बडे नगरों मे प्रेक्षागृह स्थापित किए थे। पाश्चात्य शिक्षा के प्रचार से भारतवासियो को भी अँगरेजी नाट्य-साहित्य के अध्ययन का सुअवसर प्राप्त हुआ। इस साहित्यिक आदान-प्रदान से हिन्दी मे अँगरेजी के नाटकों के अनुवाद हुए। अँगरेजी नाटककारों मे शेक्सपीयर के नाटको का बहुत अधिक प्रचार हुआ। स्वयं भारतेन्दु ने उनके Merchent of Venice का 'दुर्लभ बन्धु' नाम से अनुवाद प्रारभ किया था। १८७९ मे तोताराम वर्मा ने जोसेफ एडीसन के 'Cato' का 'केटो कृतान्त' के नाम से हिन्दी मे अनुवाद किया। तत्पश्चात् पुरोहित गोपीनाथ, लाली, लाला सीताराम आदि ने इस कार्य को और भी आगे बढाया और बीसवी शताब्दी मे भी यह परपरा जारी रही।

बीसवी शताब्दी के प्रारभ मे भारतेन्दु द्वारा स्थापित नाट्य-परपरा टूट चुकी थी और उसके स्थान पर पारसी थिएटरो के लिए लिखे गए नाटकों का प्रचार हो गया था। बेताब, हश्र काश्मीरी, शैदा, जौहर, राधेश्याम कथावाचक आदि ऐसे ही नाटककार थे। इन नाटककारो की रचनाओं मे चमत्कारपूर्ण रोमाचकारी एव आश्चर्य और कुतूहलपूर्ण दृश्यो का बाहुल्य रहता था और अद्भुत तथा भयानक रसों की प्रधानता रहती थी। उनमे प्राय: दो कथानक रहते थे—एक गभीर और दूसरा हास्यपूर्ण। यह शेक्सपीयर की भद्दी नकल थी। इस प्रकार उस समय नाट्य-कला अराजकतापूर्ण और अव्यवस्थित थी। लेखकों को नाट्य-कला के वास्तविक आदर्श का ज्ञान नही था। नाटक लिखे तो अनेक गए, किन्तु श्रेष्ठ रचनाओं का अभाव था। साहित्यिक अभिरुचि रखनेवाले व्यक्तियो ने इस परिस्थिति के प्रति असंतोष प्रकट किया और उन्होने बंगाल के द्विजेन्द्रलाल

रॉय, गिरीश घोष आदि के नाटको के अनुवाद प्रस्तुत किए जिनमे साहित्यिकता के साथ-साथ रगमचीय आवश्यकताओ की पूर्ति भी पाई जाती थी। प्रथम महायुद्ध के लगभग तक सुन्दर एव मौलिक नाटको का एक प्रकार से अभाव मिलता है—कुछ अपवाद अवश्य थे। और जिस समय अशिक्षित ग्रामीण जनता रासलीलाओं और रामलीलाओं से अपना मन बहला रही थी, पढे-लिखे धार्मिक लोग पौराणिक नाटको से सतोष प्राप्त कर रहे थे, अॅगरेजी-शिक्षित लोग ऐतिहासिक और सुधार-सबन्धी नाटको से अपनी राष्ट्रीय भावना पुष्ट कर रहे थे, उस समय जयशंकर 'प्रसाद' कथानक के सगठन, सवाद-शैली, रसात्मकता, भाषा-शैली, चरित्र-चित्रण आदि की दृष्टि से एक उच्च कोटि की नाट्य-कला लेकर सामने आए और हिन्दी नाट्य-साहित्य का सुन्दर विकास उपस्थित किया। 'प्रसाद' जी ने प्राचीन इतिहास को अपने नाटको का माध्यम बनाया। किन्तु अनेक नाटककारों ने सामयिक सामग्री के आधार पर यथार्थवादी और समस्या-नाटको की रचना की। 'प्रसाद' जी के बाद हिन्दी मे अनेक उच्च कोटि के नाटक लिखे गए है। वर्तमान नाट्य-साहित्य पर पाश्चात्य प्रभाव स्पष्ट रूप से लक्षित है।

भारतेन्दु की संक्षिप्त जीवनी

भारतेन्दु का जन्म १८५० ई० मे हुआ था। वे प्रसिद्ध सेठ अमीचंद के वशज थे और उनके पिता बाबू गोपालचन्द्र उपनाम गिरिधरदास हिन्दी के अच्छे कवि और अपने समय के प्रगतिशील व्यक्तियों में से थे। जब वे पॉच वर्ष के थे तब उनकी माता पार्वती देवी का और जब वे दस वर्ष के थे तब उनके पिता का देहान्त हो गया। पिता की असामयिक मृत्यु हो जाने के कारण उनकी शिक्षा का समुचित प्रबध न हो सका। यद्यपि वे तीन-चार वर्ष तक बनारस के क्वीन्स कॉलेज मे बराबर पढ़ने जाते थे, किन्तु उन्होने जो कुछ ज्ञान प्राप्त किया वह स्वाध्याय द्वारा। वे भारतवर्ष की लगभग सभी प्रधान भाषाएँ जानते थे। पाँच-छ वर्ष की अवस्था में ही उन्होने अपनी काव्य-प्रतिभा का परिचय देना प्रारंभ कर दिया था। पन्द्रह वर्ष की अवस्था मे उनका विवाह मन्ना देवी से हुआ। विवाह के

बाद उन्होने अनेक स्थानो की यात्रा की और अवसर मिलने पर सदैव अंध-विश्वास और अप्रामाणिकता का विरोध किया। उन्होने स्वदेशी, निज-भाषा-उन्नति, राष्ट्रीयता, भारत की उन्नति, स्त्री-शिक्षा आदि बातो पर सदैव जोर दिया। ६ जनवरी, १८८५ को चौतीस वर्ष चार महीने की अवस्था मे उनका देहान्त हो गया। उनके दो पुत्र और एक पुत्री हुई थी। किन्तु पुत्रों का बाल्यावस्था मे ही देहात हो गया। उनकी पुत्री विद्यावती एक विदुषी महिला थी। उनकी लोकप्रियता का प्रमाण इसीसे मिलता है कि सारे देश ने उन्हें 'भारतेन्दु' की उपाधि प्रदान की। भारतेन्दु की प्रतिभा चौमुखी थी और उन्होने विविध प्रकार से हिन्दी साहित्य को समृद्ध बनाया। उनका व्यक्तित्व तत्कालीन शिक्षित धनिकवर्ग की विशेषताएँ लिए हुआ था। उन्होने जीवन भर देश, भाषा और साहित्य की सेवा की। सार्वजनिक जीवन ग्रहण करते हुए उन्होने 'कविवचन सुधा' (१८६८) 'हरिश्चन्द्र मैगजीन' (१८७३) आदि पत्रो का सपादन किया। भारतीय इतिहास के सधि-काल मे आविर्भाव होने से उन्होने नवीन और प्राचीन, पाश्चात्य और भारतीय बातो का सुन्दर समन्वय उपस्थित कर भावी उन्नति के मार्ग का सृजन किया। अँगरेजी राज्य की स्थापना के फलस्वरूप जो राजनीतिक, धार्मिक, सामाजिक, आर्थिक और साहित्यिक परिवर्तन हो रहे थे उनके प्रति वे जागरूक थे। उनका जीवन-काल भारतीय नवोत्थान का प्रथम चरण था। यह नवोत्थान एक ओर तो अतीत से प्रेरणा ग्रहण कर रहा था और दूसरी ओर उसकी दृष्टि भविष्य पर लगी हुई थी। 'प्रेमघन', बालकृष्ण भट्ट, तोताराम वर्मा, प्रतापनारायण मिश्र, श्रीनिवासदास आदि ने भारतेन्दु के नेतृत्व मे तत्कालीन जीवन के हीन और उज्ज्वल दोनों पक्षो पर दृष्टिपात कर देश के मगलमय भविष्य की अवतारणा की।

'भारतदुर्दशा'

भारतेन्दु हरिश्चन्द्र ने 'नाटक' नामक निबन्ध मे नाटक के 'काव्य मिश्र', 'शुद्ध कौतुक' और 'भ्रष्ट'—ये तीन भेद किए है। 'शुद्ध कौतुक' के अतर्गत कठपुतली, बाजीगरी आदि के खेल, 'भ्रष्ट' के अंतर्गत इन्द्रसभा, रास,

यात्रा, लीला, पारसी कपनियों के नाटकादि माने है। 'काव्य मिश्र' के उन्होंने प्राचीन और नवीन दो भेद माने है। फिर प्राचीन के अतर्गत भारतीय नाटच-शास्त्र के अनुसार नाटच के रूपक और उपरूपक की गणना की गई है। नवीन भेद के सबध मे उनका कथन इस प्रकार है :——

'आजकल योरोप के नाटकों की छाया पर जो नाटक लिखे जाते है और वग देश मे जिस चाल के बहुत से नाटक बन भी चुके है वह सब नवीन भेद में परिगणित हैं। प्राचीन की अपेक्षा नवीन की परम मुख्यता बारबार दृश्यों के बदलने में है और इसी हेतु एक-एक अक मे अनेक-अनेक गर्भाको की कल्पना की जाती है क्योंकि इस समय मे नाटको के लेखो के साथ विविध दृश्यों का दिखलाना भी आवश्यक समझा गया है। . . .ये नवीन नाटक मुख्य दो भेदों मे बँटे है——एक नाटक, दूसरा गीतिरूपक। जिनमे कथा भाग विशेष और गीति न्यून हो वह नाटक और जिसमे गीति विशेष हो वह गीतिरूपक। यह दोनो कथाओं के स्वभाव से अनेक प्रकार के हो जाते है किन्तु उनके मुख्य भेद इतने किए जा सकते है यथा——१. संयोगात——अर्थात् प्राचीन नाटकों की भॉति जिसकी कथा सयोग पर समाप्त हो। २. वियोगांत—— जिसकी कथा अत मे नायिका वा नायक के मरण वा और किसी आपद घटना पर समाप्त हो। (उदाहरण "रणधीर प्रेम-मोहिनी") ३ मिश्र—— अर्थात् जिसके अत मे कुछ लोगो का तो प्राणवियोग हो और कुछ सुख पावे।

इस नवीन नाटकों की रचना के मुख्य उद्देश्य ये होते है यथा—— १ श्रृगार २. हास्य ३. कौतुक ४. समाज-सस्कार ५ देश-वत्सलता। श्रृगार और हास्य के उदाहरण देने की आवश्यकता नहीं, जगत् मे प्रसिद्ध है। कौतुक-विशिष्ट वह है जिसमे लोगों के चित्त-विनोदार्थ किसी यत्रविशेष द्वारा या और किसी प्रकार अद्भुद घटना दिखाई जायँ। समाज-सस्कारक नाटको मे देश की कुरीतियों का दिखलाना मुख्य कर्त्तव्य कर्म है। यथा शिक्षा की उन्नति, विवाह-संबंधी कुरीति-निवारण, अथवा धर्म-सबधी अन्यान्य विषयों में संशोधन इत्यादि। किसी प्राचीन कथाभाग का इस बुद्धि से सगठन कि, देश की उससे कुछ

उन्नति हो, इसी प्रकार के अतर्गत है। (इसके उदाहरण, सावित्री-चरित्र, दु खिनी-बाला, बाल्यविवाह-विदूषक, जैसा काम वैसा ही परिणाम, जय नारसिह की, चक्षुदान इत्यादि।) 'देशवत्सल नाटकों का उद्देश्य पढ़नेवालों वा देखनेवालों के हृदय मे स्वदेशानुराग उत्पन्न करना है और ये प्रायः करुण और वीररस के होते हैं। (उदाहरण-भारतजननी, नीलदेवी, भारतदुर्दशा इत्यादि।) इन पाँच उद्देश्यो को छोड़ कर वीर, सख्य इत्यादि अन्य रसों मे भी नाटक बनते है।'

इस लबे उद्धरण से भारतेन्दु के नाटकीय दृष्टिकोण पर यथेष्ट प्रकाश पडता है। उससे प्रकट हो जाता है कि इस क्षेत्र मे भी उन्होने समन्वयात्मक बुद्धि का प्रयोग किया। परिवर्तित समय और रुचि के अनुसार उन्होंने नवीन नाट्य-पद्धति का अवलम्बन भी ग्रहण किया। 'भारत-दुर्दशा' मे इस नवीन नाट्य-पद्धति का योग है। किन्तु इस सबध में यह बात ध्यान देने योग्य है कि नवीन नाट्य-पद्धति का योग होने पर भी भारतेन्दु ने उसे 'नाट्यरासक' के नाम से पुकारा है। प्राचीन नाट्य-शास्त्र के अनुसार 'नाट्यरासक' अठारह प्रकार के उपरूपकों में से एक है। स्वयं भारतेन्दु ने उसकी परिभाषा इस प्रकार दी है:—

'इसमे एक अक, नायक उदात्त, नायिका वासक-सज्जा, पीठमर्द उपनायक, और अनेक प्रकार के गान नृत्य होते है।'

'नाट्यरासक' की अन्य परिभाषाओ का अध्ययन करने और उनकी तुलना भारतेन्दु द्वारा दी गई परिभाषा से करने के फलस्वरूप दो निष्कष हमारे सामने आते है। १. भारतेन्दु द्वारा दी गई परिभाषा और अन्य परिाषाओ में कुछ बाते समान रूप से मिलती है। वे समान बाते है:—

(१) एक अंक।
(२) नायक उदात्त (धीरोदात्त)
(३) नायिका वासकसज्जा।
(४) उपनायक पीठमर्द।
(५) अनेक प्रकार के ताल और लय संयुक्त नृत्य और गान (अथवा लास्य के अग)।

२. वे बाते जिनका उल्लेख भारतेन्दु ने अपनी परिभाषा मे नही किया :—

(१) हास्य किवा शृंगार रस-प्रधान।

(२) मुख और निर्वहण संधियाँ, अथवा प्रतिमुख सधि को छोड कर शेष चारो सधियाँ।

अस्तु, इन दो निष्कर्षो के प्रकाश मे ही 'भारत-दुर्दशा' का अध्ययन करना उचित होगा।

रचना-पद्धति की दृष्टि से 'भारत दुर्दशा' मिश्र रचना है, अर्थात् उसमें नवीन और प्राचीन का मिश्रण है। कथाभाग की दृष्टि से उसमे पूर्ण नवीनता है, क्योकि उसका उद्देश्य देशवत्सलतापूर्ण और समाज-संस्कारक है। हास्य-अथवा शृगार-रस की प्रधानता के स्थान पर उसमे वीर और करुण-रस की प्रधानता है। 'भारतदुर्दशा' मे छ. अक है। यह वात भी प्राचीन शास्त्रीय नियम के विरुद्ध है। स्वयं भारतेन्दु ने अपनी दी हुई परिभाषा मे एक ही अक माना है। नाटकीय रचना मे आधुनिक दृश्य-योजना कथानक-वैचित्र्य की दृष्टि से रखी जाती है और उसके द्वारा कथाश के विविध सूत्र एक अक के अन्तर्गत सगठित किए जाते है। 'भारतदुर्दशा' मे यह तथ्य दृष्टिगोचर नही होता। उसके अंक कथानक के सीधे-सादे स्थूल विभाजन है, प्रत्येक अक की कथा स्वत पूर्ण नही है; आगे क्या होनेवाला है, इस बात की उत्सुकता बनी रहती है। साथ ही उनके द्वारा रसोद्रेक के स्थायी प्रभाव की सृष्टि होती है। ग्रथ मे मगलाचरण के बाद न तो प्रारभिक भूमिकाएँ है और न अत मे भरत-वाक्य है। योगी का लावनी-गान कोरस के ढग पर है। नाटक का अत भी दुखपूर्ण है, अर्थात् भारतीय सुखान्त-पद्धति के अनुकूल नही है। कटार का आघात ही प्राचीन नियमानुसार वर्जित दृश्य है। प्राचीनता की दृष्टिसे 'भारतदुर्दशा' का नायक, भारत, धीरोदात्त नायक है और उपनायक, भारत-भाग्य, पीठमर्द है, क्योकि वह भारत का मुख्य सहायक और अंतरग मित्र है और उसमें सभी उत्तम गुण विद्यमान है। इसके अतिरिक्त यह रचना विविध प्रकार के गान, नृत्य आदि से समन्वित है। द्वितीय अंक में जहाँ नेपथ्य में गंभीर

और कठोर स्वर से यह सुनाई पडता है—'अब भी तुझको अपने नाथ का भरोसा है। खडा तो रह। अभी मैंने तेरी आशा की जड़ न खोद डाली तो मेरा नाम नही।' मुख सधि (बीज नामक अर्थ-प्रकृति और आरभ नामक कार्यावस्था) है, और अत मे जब भारत-भाग्य छाती मे कटार का आघात कर लेता है तो निर्वहण संधि (कार्य नामक अर्थ-प्रकृति और फलागम नामक कार्यावस्था) है। इन दो प्रधान बातो के अतिरिक्त वैसे तीसरे-चौथे अंको मे बिन्दु अर्थ-प्रकृति, प्रयत्न कार्यावस्था, और प्रतिमुख सधि, पाँचवे अक मे पताका अर्थप्रकृति (भारतवासियो की दुर्बलताएँ और डिसलायलटी द्वारा सब का पकडा जाना प्रधान फल का सिद्ध करने वाला है), प्राप्त्याशा कार्यावस्था और गर्भ सधि भी मानी जा सकती है। प्रतिमुख सधि इसलिए है क्योंकि तीसरे-चौथे अको मे मुख सधि मे दिए प्रधान फल का निदर्शन ही होता है। विमर्श सधि इस रचना मे नही है, यद्यपि ऊपर दिए लक्षण के अनुसार प्रतिमुख सधि को छोडकर नाट्य-रासक मे शेष चारों सधियाँ हो सकती है। इस प्रकार 'भारतदुर्दशा' मे नवीन और प्राचीन दोनों प्रकार के लक्षण घटित होते है। इनमें भी प्रमुखता नवीन लक्षणो की है।

'भारतदुर्दशा' का कथानक छे अकों मे इस प्रकार विभाजित है :—

१ अक :—योगी का लावनी-गान द्वारा भारत के प्राचीन गौरव, पारस्परिक फूट और कलह के फलस्वरूप यवनो के भारतागमन और भारत मे अंगरेजी राज्य की स्थापना और आर्थिक-शोषण तथा दुरवस्था का वर्णन है।

२ अंक :—दीनहीन भारत अपनी दुःख-गाथा सुनाते-सुनाते मूर्च्छित हो जाता है। आशा निर्लज्जता के साथ भारत को उठाकर ले जाती है।

३ अक :—भारत-दुर्दैव सत्यानाश, फूट, सतोष, डाह, लोभ, भय, उपेक्षा, स्वार्थपरता, दुर्भिक्ष, अतिवृष्टि, अनावृष्टि, आदि की सहायता से भारत के धन, बल और विद्या तीनो को नष्ट करता है।

४ अंक :—भारत-दुर्दैव रोग, आलस्य, मदिरा, अधकार आाद ार भारत के नाश की तैयारियाँ करता ह ।

५ अंक :—सात सभ्यो की एक छोटी-सी समिति भारत-दुर्दैव से भारत की रक्षा का उपाय सोचती है। वही पर डिसलॉयल्टी का प्रवेश होता ई

और वह 'इगलिश पालिसी नामक ऐक्ट के हाकिमेच्छा नामक दफा से' सब को पकड ले जाती है।

६ अक :—भारत-भाग्य अचेत पड़े हुए भारत को जगाने की चेष्टा करता है, वह उसके पूर्व गौरव का वर्णन कर उसे चेतन करना चाहता है, अँगरेजी राज्य मे उन्नति करने की बात चाहता है, किन्तु भारत के उठने की आशा न देखकर अपनी छाती मे कटार का आघात कर लेता है।

जैसा कि ऊपर कहा जा चुका है कि भारत की दीनहीन एव पतित दशा और उसके प्राचीन गौरव का चित्रण करना भारतेन्दु का मुख्य उद्देश्य था। अत में उन्होने अपनी घोर निराशा का परिचय दिया है। किन्तु भारतेन्दुकालीन भारतीय जीवन की परिस्थितियों का अध्ययन करने से यह स्पष्ट ज्ञात हो जायगा कि उस समय प्रकाश की कोई रेखा प्रकट भी तो नही हुई थी। वास्तव मे भारतेन्दु ने अपनी इस रचना मे यथार्थवादी दृष्टिकोण ग्रहण किया है।

'भारतदुर्दशा' की कथा राष्ट्रीय एव सामाजिक और उत्पाद्य है। भारत की करुणाजनक परिस्थिति उसका प्रधान आधार है। कथा से शाखा प्रशाखाएँ नही निकलती और उसमें दुरूहता का अभाव है। वह समान गति से आगे बढ़ती चली जाती है और चरम सीमा पर समाप्त हो जाती है। अको का विस्तार भारतेन्दु ने स्वच्छदतापूर्वक किया है। उनमे घटनाओं की प्रधानता न होकर एक भावना की प्रधानता है। ग्रथ के प्रारंभिक अश मे ही रचना की कथा का आभास प्राप्त हो जाता है। भारतेन्दु ने समकालीन भारतीय सामाजिक, धार्मिक, राजनीतिक, आर्थिक और सास्कृतिक जीवन को आधार मान कर उसका सगठन किया है और वह भारतीय नवोत्थानकालीन भावना से पूर्णतः ओतप्रोत है। उसकी अधोगति मे यदि विदेशी आक्रमणकारियों और शासकों का हाथ था तो स्वय भारतवासियों का भी कोई कम हाथ नही था। ऐसी परिस्थिति मे उन्होने अँगरेज़ी-राज्य की अच्छाइयो को ध्यान मे रखते हुए और उसकी कुनीतियो की निंदा करते हुए जन-हित पर जोर दिया। कथा में लेखक ने अपने भावो का मानवीकरण उपस्थित किया है। वास्तव में नाटककार ने जो प्रसंग उठाया

है उसका सफलतापूर्वक और प्रभावोत्पादक ढग से निर्वाह किया है। उसमे शिथिलता कही नही है।

'भारतदुर्दशा' के पात्र नाटककार की भावधारा के प्रतीक है। भारतेन्दु के समय में एक ओर तो भारतीय पतन के चिह्न चारो ओर विद्यमान थे, दूसरी ओर भारतीय नवोत्थान की भावना से प्रेरित नवशिक्षित भारतवासी जीवन के भावी प्रशस्त मार्ग का निर्माण करने मे संलग्न थे। भारत मे अँगरेजी साम्राज्यवादी और औपनिवेशिक शासन नीति के फलस्वरूप पश्चिम की जीवित जाति के साथ सपर्क स्थापित होने का जो परिणाम दृष्टिगोचर होना चाहिए था वह नवशिक्षितो के प्रयास करने पर भी दृष्टिगोचर नही हो रहा था। भारतीय सभ्यता एवं सस्कृति मे पालित-पोषित अल्पसंख्यक नवशिक्षितो को छोडकर अधिकतर नवशिक्षित पश्चिम की चकाचौध उत्पन्न करनेवाली सभ्यता के आघात से मार्ग-भ्रष्ट हो गए थे। इसके अतिरिक्त जो बहुत बडा भाग शेष था वह अंधकार-लिप्त था। यह सब कुछ देखकर भारतीय सभ्यता एवं सस्कृति में पालित-पोषित अल्पसंख्यक भारतवासियो को अत्यन्त दु:ख और निराशा का सामना करना पड़ता था। भारत-दुर्दैव का उन्होने सजीव और सफल चित्रण पाठको के सामने प्रस्तुत किया है। भारत-भाग्य और भारत का अंतिम चित्रण बहुत-कुछ वस्तु-स्थिति पर ही आधारित है। किंतु यदि हम भारत, भारत-भाग्य और सात सभ्यों के सभी कथनों का ध्यानपूर्वक अध्ययन करे तो प्रकाश की क्षीण रेखा अवश्य दिखाई दे जाती है। ये सात सभ्य उन शक्तियों के प्रतिनिधि है जो उस समय भारत की दशा सुधारने मे दत्त-चित्त थी। ऐतिहासिक कारणो से बंगाली शिक्षा और सार्वजनिक क्षेत्र मे अग्रगण्य थे। संपादक भी तत्कालीन सार्वजनिक जीवन के प्रधान अग थे। कवियो (तथा अन्य साहित्यिको) से ऐसे साहित्य-सृजन की आशा थी जो देश के उत्थान मे सहायक हो सकता था। इन सभी का भारतेन्दु ने अत्यन्त सजीव वर्णन किया है। बगालियो, सपादको और रीतिकालीन परपरा के मोह मे ग्रस्त कवियों की प्रमुख-प्रमुख विशेषताओ का उद्घाटन करने मे उन्होने अपनी अभिव्यजना-शक्ति का परिचय दिया है। इन

तीनो वर्गो को भारतेन्दु भली भाँति जानते थे। सपादक और कवि तो वे थे ही। साथ ही अपने व्यक्तिगत जीवन के अनुभव से देशी लोगों की प्रवृत्तियो से भी वे अनभिज्ञ नही थे। चुगली खाना, सरकारी अफसरो से सशकित रहना और दूसरों के दोषो पर दृष्टि रखना, यही उनका कार्य था। अस्तु, इस रचना मे भारतेन्दु ने प्रतीको का भी सजीव और विस्मृत न होने वाला रूप उपस्थित किया है।

'भारतदुर्दशा' मे पात्रो के सवादों मे भारतेन्दु को सफलता प्राप्त हुई है। स्वगत-कथनों के द्वारा उनके पात्र परिस्थितियों पर प्रकाश डालते है। भारत-भाग्य का स्वगत-कथन इसका एक उदाहरण है। वह अपनी दशा की व्याख्या या उसका विश्लेषण भी करता है। 'भारतदुर्दशा' के कथोपकथन पात्रों के चरित्र और उनकी मनोदशा तथा आतरिक भावों पर प्रकाश डालने वाले है। उनसे नाटकीय कथावस्तु को गति प्राप्त होती है और अनेक ऐसी बातों का पता चलता है जिन्हे नाटककार स्वय अपनी ओर से न कह सकता था। भारत-भाग्य, भारत-दुर्दैव, बंगाली, एडीटर, कवि, देशी आदि पात्र अपने स्वभाव और धार्मिक, सामाजिक एव राजनीतिक स्थिति के अनुकूल भाव प्रकट करते हुए कथोपकथन मे सलग्न होते है; वे अपनी विभिन्न स्थितियों के अनुसार भाव प्रकट करते है। ऐसा देखने मे नही आता कि एक दुष्ट पात्र सज्जन की भाँति बात करे। भाषा भी सब पात्रों की स्वाभाविक है। सामान्यतः उन्होने लंबे-लंबे कथोपकथन नही रखे, किन्तु जहाँ भावो की तीव्रता या रस की निष्पत्ति पाई जाती है वहाँ वे स्वगतों के रूप मे आवश्यकता से अधिक लबे होकर नाटकीय कार्य-व्यापार की प्रगति में बाधक सिद्ध होते है। भारत-भाग्य का स्वगत-कथन इसका एक उदाहरण है। किन्तु उसमे रसात्मकता का अभाव नहीं है। 'भारत-दुर्दशा' मे भारत-भाग्य के स्वगत-कथन आदि में करुण और वीर रसों की निष्पत्ति पाई जाती है। भारतेन्दु के पात्र बेकार की बात नही करते। साथ ही वे सीधे-सीधे ढग से बात करते है, न कि प्रपंच या हेर-फेर के साथ। पात्रों के मानसिक भावों का प्रकटीकरण भी अवसरानुकूल हुआ है। उनके कथोपकथनों मे व्यावहारिकता, स्वच्छंदता और सजीवता

है। वे बोझिल नही है। वास्तव मे अभिनय की दृष्टि से कुछ अपवाद-स्वरूप स्थलो को छोडकर इस ग्रथ मे भारतेन्दु के कथोपकथन सहायक सिद्ध होगे।

'भारत-दुर्दशा' मे भारत-दुर्दैव के प्रयास मे उत्साह होने के कारण वीररस और भारत-भाग्य की अवस्था मे करुणरस माना जायगा। हास्य के लिए भी उसमे कही-कही उपयुक्त स्थल आ गए है। भारतेन्दु की इस रचना मे तत्कालीन सामाजिक, धार्मिक, साहित्यिक, राजनीतिक और आर्थिक जीवन के जीते-जागते चित्र मिलते है। उसमे हमे भारत के उत्थान और पतन की कहानी मिलती है। रगमच की दृष्टि से भी 'भारत-दुर्दशा' मे, कुछ परिवर्तनो के बाद (जैसे, लबे-लबे पद्यात्मक अश या स्वगत-कथनो को छोटा कर देने से), कोई कठिनाई दृष्टिगोचर नही होती। उसके प्रतीकात्मक पात्र रगमच पर भली भाँति दिखाए जा सकते है। वास्तव मे सभी दृष्टियों से भारतेन्दु की यह रचना एक सफल रचना है और हिन्दी-साहित्य में उसका गौरवपूर्ण स्थान है।

'भारत-दुर्दशा' से भारतेन्दु के विचारों पर भी अच्छा प्रकाश पडता है। जब उनका ध्यान देश की अधोगति की ओर जाता था तो विदेशी आक्रमणकारियों के घातक प्रभाव के साथ-साथ प्राचीन आर्य गौरव और अनेक वीरो तथा वीर-कृत्यों के उदाहरणो मे उनकी राष्ट्रीयता ध्वनित हो उठती थी। उन्होने भारत के प्राचीन गौरव और वीर-कृत्यो के सबध मे लिखा है :—

'. . . . सबके पहले जेहि ईश्वर धन बल दीनो।
सबके पहले जेहि सभ्य विधाता कीनो ॥ . . .' आदि

अथवा

'भारत के भुज-बल जगरच्छित।
भारत विद्या लहि जग सिच्छित

'भारत तेज जगत विस्तारा। भारत भय कपत ससारा ॥ . . .' आदि

उसी सभ्यता और संस्कृति के सर्वोच्च शिखर पर आसीन, ज्ञान-गरिमा से मंडित और वीर-कृत्यो के कारण सर्वपूज्य और जगत्वद्य भारतवर्ष

की कैसी क्षोभपूर्ण अवस्था हो गई थी, उसकी कितनी दुर्दशा हो गई थी, वह भारतेन्दु की निम्नलिखित पक्तियों से प्रकट होता है :—

'रोवहु सब मिलि क आवहु भारत भाई।
हा हा! भारत दुर्दशा न देखी जाई॥ .....' आदि

अथवा

'. कहा करी तकसीर तिहारी। रे बिधि रुष्ट याहि की बारी
सबै सुखी जग के नरनारी। हे विधना भारतहि दुखारी॥ ...'आदि

उन्होने रोग, महर्घ, कर, मद्य, आलस्य, धनहीनता, बलहीनता, अविद्या, पारस्परिक फूट और कलह, यवनो (मुसलमानो) के कारण दु ख, पाश्चात्य सभ्यता का अधानुकरण, धार्मिक-अधविश्वास, छूआछूत, भूत-प्रेत और अनेक देवी-देवताओ की पूजा, दुर्भिक्ष, निज भाषा के प्रति उदासीनता और फलतः अध पतन, नाना प्रकार के मतो का बाहुल्य, अनैक्य, असगठन आदि का उल्लेख कर भारत मे चारो ओर छाए हुए अधियारे का अत्यन्त क्षोभपूर्ण शब्दो मे वर्णन किया है। अँगरेजी-राज्य में दिन-रात की कलह और अशान्ति से छुटकारा, विविध वैज्ञानिक साधनो का सुखोपभोग, वैध-शासन, सुन्दर न्याय-पद्धति, नव्य-शिक्षा आदि के कारण उन्होंने अँगरेज़ी राज्य के गुणगान किए। प्रगति की इच्छा से उन्होंने अँगरेजो द्वारा प्रचलित सुधारों की सराहना की और उन्हे ग्रहण किया। अँगरेजी राज्य की नियामतो के साथ-साथ 'नराणा च नराधिप,' वाली भावना भी उस समय काम कर रही थी। इसलिए भारतेन्दु ने ब्रिटिश सिहासन के प्रति भक्ति भी प्रकट की और विक्टोरिया को आर्येश्वरी, अब, देवी आदि नामो से सबोधित किया। यही उनकी राजभक्ति की नीव है। इसी सबंध द्वारा वे भारत और ग्रेट-ब्रिटेन के समस्त हित-साधनों मे सामञ्जस्य उपस्थित करने लगते थे। किन्तु नवीन शिक्षा प्राप्त कर मध्यम वर्ग ने देश को उन्नति के मार्ग पर अग्रसर करने की चेष्टा भी की और देश के शासन में भाग लेने की आकाक्षा प्रकट की। जब कभी अवसर मिलता था तो वे राजनीतिक दृष्टि से जन-हित की माँगें सरकार के सामने पेश करते थे और राजनीतिक तथा शासन-सबंधी अनीतियो को दूर करने की अपील करते थे। राजभक्ति

प्रकट करते हुए भी भारतेन्दु 'गवर्नमेट के आदमी' नही थे। उनमे विचार-स्वातत्र्य था। भारत की नवोत्थित राष्ट्रीयता से वे ओतप्रोत थे। राष्ट्रीय हित का ध्यान रखते हुए उन्होंने सदैव सरकारी अनीतियो का विरोध किया और इसीलिए उन्हे सरकार का कोप-भाजन बनना पड़ा। उन्होने सरकार की आर्थिक नीति का घोर विरोध किया है :—

'अँगरेज राज सुख साज सजे सब भारी।
पै धन बिदेस चलि जात इहै अति ख्वारी ॥. . . .' आदि

वे चाहते थे कि भारत मे स्वदेशी-प्रचार और औद्योगिक उन्नति हो। सात सभ्यो की कमेटी वाले अंश मे उन्होने सरकारी निरंकुशता का अत्यन्त प्रभावोत्पादक ढग से दिग्दर्शन कराया है। जिस समय ये पक्तियाँ लिखी गई थी उस समय लार्ड लिटन के अनुदार शासन से प्रजा असन्तुष्ट थी।

अँगरेज सरकार के सामने अपनी माँगे पेश करने के साथ-साथ भारतेन्दु सामाजिक और धार्मिक क्षेत्रो मे जनता को सुधारने और उसे उन्नति के मार्ग की ओर अग्रसर करने के लिए सदा प्रयत्न करते रहते थे। नवीन शिक्षा के फलस्वरूप नवीन और उन्नत विचारो का जन्म हुआ। उनके प्रकाश में भारतीय जीवन का फिर से सस्कार करने की बात सोचना स्वाभाविक ही था। अँगरेजी राज्य मे देशवासियो की निरुद्यमता, उनका आलस्य, पतनोन्मुख सतोष आदि की ओर लक्ष्य करते हुए भारतेन्दु भारत के मुख से कहलाते है :—

'हा! यह वही भूमि है जहाँ साक्षात् भगवान् श्रीकृष्णचन्द्र के दूतत्व करने पर भी. . . . ' आदि।

अँगरेजों के पास विद्या का प्रकाश था। अंधकार वहाँ फटक भी नही सकता था। इन्ही अँगरेजो के सपर्क मे आने पर भारतेन्दु अपने देशवासियो को उन्नतिपथगामी देखना चाहते थे। किन्तु

'. . . . .अँगरेजहु को राज पाइकै रहे कूढ के कूढ।
स्वारथ-पर विभिन्न-मति-भूले हिन्दू सब ह्वै मूढ ॥
जग के देश बढत बदि बदि के सब बाजी जेहि काल।
ताहू समय रात इनको है ऐसे ये बेहाल ॥. . . . .'

इस सबध में उन्होने 'भारत-दुर्दैव' की फौज के रूप मे पतन के अनेक कारणों का उल्लेख किया है। अँगरेजी शिक्षितो का अधानुकरण भी उन्हे अच्छा न लगता था :—

'... लिया भी तो अँगरेजों से औगुन !'....

अतएव भारतेन्दु को भारत का सर्वनाश निश्चय ही दिखाई पड़ता था —

'निहचै भारत को अब नास।.....' आदि

यद्यपि अँगरेज अफसरो की निरकुशता उनके मार्ग मे बाधक थी, तब भी वे सुधार-आदोलन की अत्यन्त आवश्यकता समझते थे। किन्तु भारत-भाग्य के शब्दों में निराशा प्रकट करते हुए भी उनका कहना है :—

'जागो जागो रे भाई।
सोअत निसि बैस गँवाई। जागो.....' आदि।

वास्तव मे भारतेन्दु भारतीय नवोत्थान के साकार प्रतीक थे। एक ओर यदि उनकी दृष्टि भूतकाल के गौरव की ओर थी, तो दूसरी ओर वे प्राचीन और नवीन के सुन्दर समन्वय द्वारा भविष्य की ओर आशा लगाए हुए थे। वे देश को पतन के गर्त से निकाल कर उन्नति की ओर ले जाना चाहते थे। किन्तु देशवासियों की निरुद्यमता देख उन्हे अत्यन्त मानसिक क्लेश होता था। 'भारतदुर्दशा' इसका प्रत्यक्ष उदाहरण है।

भारतदुर्दशा

(मंगलाचरण)

जय सतजुग-थापन-करन, नासन म्लेच्छ-अचार।
कठिन धार तरवार कर, कृष्ण कल्कि अवतार।।

पहिला अंक

स्थान—बीथी

(एक योगी गाता है)

(लावनी)

रोअहु सब मिलिकै आवहु भारत भाई।
हा हा! भारतदुर्दशा न देखी जाई।। ध्रुव।।
सबके पहिले जेहि ईश्वर धन बल दीनो।
सबके पहिले जेहि सभ्य बिधाता कीनो।।
सबके पहिले जो रूप-रंग रस-भीनो।
सबके पहिले विद्याफल जिन गहि लीनो।।
अब सबके पीछे सोई परत लखाई।।
हा हा! भारतदुर्दशा न देखी जाई।।
जहँ भए शाक्य हरिचंदरु नहुष ययाती।
जहँ राम युधिष्ठिर बासुदेव सर्याती।।
जहँ भीम करन अर्जुन की छटा दिखाती।
तहँ रही मूढ़ता कलह अविद्या-राती।।
अब जहँ देखहु तहँ दुखहि दुःख दिखाई।
हा हा! भारतदुर्दशा न देखी जाई।।

लरि बैदिक जैन डुबाई पुस्तक सारी।
करि कलह बुलाई जवनसैन पुनि भारी॥
तिन नासी बुधि बल विद्या धन बहु बारी।
छाई अब आलस-कुमति-कलह अँधियारी॥
भए अध पगु सब दीन हीन बिलखाई।
हा हा! भारतदुर्दशा न देखी जाई॥
अँगरेजराज सुख साज सजे सब भारी।
पै धन बिदेस चलि जात इहै अति ख्वारी॥
ताहू पै महँगी काल रोग बिस्तारी।
दिन दिन दूने दुख ईस देत हा हा री।
सबके ऊपर टिक्कस की आफत आई।
हा हा! भारतदुर्दशा न देखी जाई॥

(पटोत्तोलन)

दूसरा अंक

स्थान—श्मशान, टूटे-फूटे मंदिर

कौआ, कुत्ता, स्यार घूमते हुए, अस्थि इधर-उधर पड़ी है।

(भारत * का प्रवेश)

भारत—हा! यह वही भूमि है जहाँ साक्षात् भगवान् श्रीकृष्णचंद्र के दूतत्व करने पर भी वीरोत्तम दुर्योधन ने कहा था "सूच्यग्रं नैव दास्यामि विना युद्धेन केशव" और आज हम उसी भूमि को देखते हैं कि श्मशान हो रही है। अरे यहाँ की योग्यता, विद्या, सभ्यता, उद्योग उदारता, धन, बल, मान, दृढ़चित्तता, सत्य सब कहाँ गए? अरे पामर जयचन्द्र! तेरे उत्पन्न हुए बिना मेरा क्या डूबा जाता था? हाय! अब मुझे कोई शरण देने वाला नहीं। (रोता है) मात, राजराजेश्वरि, विजयिनी! मुझे बचाओ। अपनाए की लाज रक्खो। अरे दैव ने सब कुछ मेरा नाश कर दिया पर अभी संतुष्ट नहीं हुआ। हाय! मैंने जाना था कि अँगरेजों के हाथ में आकर हम अपने दुखी मन को पुस्तकों से बहलावेंगे और सुख मानकर जन्म बितावेंगे पर दैव से वह भी न सहा गया। हाय! कोई बचानेवाला नहीं।

(गीत)

कोऊ नहिं पकरत मेरो हाथ।
बीस कोटि सुत होत फिरत मैं हा हा होय अनाथ॥
जाकी सरन गहत सोइ भारत सुनत न कोउ दुखगाथ।
दीन बन्यौ इत सों उत डोलत टकरावत निज माथ॥
दिन-दिन बिपति बढ़त सुख छीजत देत कोऊ नहिं साथ।
सब बिधि दुख सागर मैं डूबत धाइ उबारौ नाथ॥

---

* फटे कपड़े पहिने, सिर पर अर्द्ध किरीट, हाथ में टेकने की छड़ी, शिथिल अंग।

(नेपथ्य मे गभीर और कठोर स्वर से)

अब भी तुझको अपने नाथ का भरोसा है! खडा तो रह। अभी मैने तेरी आशा की जड न खोद डाली तो मेरा नाम नही।

भारत—(डरता और कॉपता हुआ रोकर) अरे यह विकरालवदन कौन मुँह बाए मेरी ओर दौड़ता चला आता है? हाय-हाय इससे कैसे बचेगे। अरे यह तो मेरा एक ही कौर कर जायगा। हाय! परमेश्वर बैकुठ मे और राजराजेश्वरी सात समुद्र पार, अब मेरी कौन दशा होगी? हाय अब मेरे प्राण कौन बचावेगा? अब कोई उपाय नही। अब मरा, अब मरा। (मूर्छा खाकर गिरता है)।

(निर्लज्जता * आती है)

निर्लज्जता—मेरे आछत तुमको अपने प्राण की फिक्र। छि छि.! जीओगे तो भीख मॉग खाओगे। प्राण देना तो कायरो का काम है। क्या हुआ, जो धन-मान सब गया "एक जिन्दगी हजार नेआमत है।" (देखकर) अरे सचमुच बेहोश हो गया तो उठा ले चले। नही-नही, मुझसे अकेले न उठेगा। (नेपथ्य की ओर) आशा! आशा! जल्दी आओ।

(आशा ‡ आती है)

निर्लज्जता—यह देखो भारत मरता है, जल्दी इसे घर उठा ले चलो।

आशा—मेरे आछत किसी ने भी प्राण दिया है? ले चलो, अभी जिलाती हूँ।

(दोनो उठाकर भारत को ले जाती है)

---

* जॉघिया—सिर खुला—ऊँची चोली—दुपट्टा ऐसा गिरता पडता कि अग खुले, सिर खुला, खानगियो का सा वेष।

‡ लडकी के वेष मे।

तीसरा अंक

स्थान-मैदान

(फौज के डेरे दिखाई पडते हैं। भारतदुर्दैव * आता है)

भारतदु०——कहाँ गया भारत मूर्ख! जिसको अब भी परमेश्वर और राजराजेश्वरी का भरोसा है? देखो तो अभी इसकी क्या-क्या दुर्दशा होती है।

(नाचता और गाता हुआ)

अरे !
उपजा ईश्वर कोप से, औ आया भारत बीच।
छार-खार सब हिंद करूँ, मैं, तो उत्तम नहिं नीच।।
मुझे तुम सहज न जानो जी, मुझे इक राक्षस मानो जी।।
कौडी-कौडी को करूँ, मै सबको मुहताज।
भूखे प्रान निकालूँ इनका, तो मै सच्चा राज।। मुझे०
काल भी लाऊँ महँगी लाऊँ, और बुलाऊँ रोग।
पानी उलटा कर बरसाऊँ, छाऊँ जग मे सोग। मुझे०
फूट बैर औ कलह बुलाऊ, ल्याऊँ सुस्ती जोर।
घर-घर मे आलस फैलाऊँ, छाऊँ दुख घनघोर।। मुझे०
काफिर काला नीच पुकारूँ, तोड़ूँ पैर औ हाथ।
दूँ इनको संतोष खुशामद, कायरता भी साथ।। मुझे०
मरी बुलाऊँ देस उजाड़ूँ, महँगा करके अन्न।
सबके ऊपर टिकस लगाऊँ, धन है मुझको धन्न।।
मुझे तुम सहज न जानो जी, मुझे इक राक्षस मानोजी।

(नाचता है)

अब भारत कहाँ जाता है, ले लिया है। एक तस्सा बाकी है, अबकी हाथ मे वह भी साफ है! भला हमारे बिना और ऐसा कौन कर

---

* क्रूर, आधा क्रिस्तानी आधा मुसलमानी वेष, हाथ में नगी तलवार लिए।

सकता है कि अँगरेजी अमलदारी मे भी हिंदू न सुधरे! लिया भी तो अँगरेजों से औगुन! हा हाहा! कुछ पढे-लिखे मिलकर देश सुधारा चाहते है! हहा हहा! एक चने से भाड फोडेगे। ऐसे लोगों को दमन करने को मै जिले के हाकिमों को न हुक्म दूँगा कि इनको डिसलायल्टी मे पकडो और ऐसे लोगो को हर तरह से खारिज करके जितना जो बडा मेरा मित्र हो उसको उतना बडा मेडल और खिताब दो। है! हमारी पालिसी के विरुद्ध उद्योग करते है, मूर्ख! यह क्यों? मै अपनी फौज ही भेजके न सब चौपट करता हूँ। (नेपथ्य की ओर देखकर) अरे कोई है? सत्यानाश फौजदार को तो भेजो।

(नेपथ्य मे से "जो आज्ञा" का शब्द सुनाई पडता है)

देखो मै क्या करता हूँ। किधर-किधर भागेगे।

(सत्यानाश फौजदार आते है)

(नाचता हुआ)

सत्या०फौ०—हमारा नाम है सत्यानास। आए है राजा के हम पास।।
धरके हम लाखो ही भेस। किया चौपट यह सारा देस।।
बहुत हमने फैलाए धर्म। बढ़ाया छुआछूत का कर्म।।
होके जयचद हमने एक बार। खोल ही दिया हिंद का द्वार।।
हलाकू चंगेजो तैमूर। हमारे अदना अदना सूर।।
दुरानी अहमद नादिरसाह। फौज के मेरे तुच्छ सिपाह।।
है हममे तीनो कल बल छल। इसी से कुछ नहि सकती चल।।
पिलावैगे हम खूब शराब। करैगे सबको आज खराब।।

भारतदु०—अहा सत्यानाशजी आए। आओ, देखो अभी फौज को हुक्म दो कि सब लोग मिलके चारों ओर से हिंदुस्तान को घेर लें। जो पहिले से घेरे है उनके सिवा औरो को भी आज्ञा दो कि बढ़ चले।

सत्या० फौ०—महाराज "इद्रजीत सन जो कछु भाखा, सो सब जनु पहिलहि करि राखा।" जिनको आज्ञा हो चुकी है वे तो अपना काम कर ही चुके और जिसको जो हुक्म हो, कह दिया जाय।

भारत दु०—किसने किसने क्या क्या किया है?

सत्या० फौ०—महाराज! धर्म ने सबके पहिले सेवा की।

रचि बहु बिधि के वाक्य पुरानन माँहि घुसाए।
शैव शाक्त वैष्णव अनेक मत प्रगटि चलाए॥
जाति अनेकन करी नीच अरु ऊँच बनायो।
खान पान सबध सबन सो बरजि छुड़ायो॥
जन्मपत्र बिधि मिले ब्याह नहिं होन देत अब।
बालकपन मे ब्याहि प्रीति-बल नास कियो सब॥
करि कुलीन के बहुत ब्याह बल बीरज मारचो।
विधवा-ब्याह निषेध कियो बिभिचार प्रचारचो॥
रोकि विलायत-गमन कूपमडूक बनायो।
औरन को ससर्ग छुड़ाइ प्रचार घटायो॥
बहु देवी देवता भूत प्रेतादि पुजाई।
ईश्वर सो सब बिमुख किए हिदू घबराई॥

भारतदु०—आहा! हाहा! शाबाश! शाबाश! हाँ, और भी कुछ धर्म्म ने किया?

सत्या०फौ०—हाँ महाराज।

अपरस सोल्हा छूत रचि, भोजन-प्रीति छुडाय।
किए तीन तेरह सबै, चौका चौका लाय॥

भारतदु०—और भी कुछ?

सत्या० फौ०—हाँ,

रचिकै मत वेदात को, सबको ब्रह्म बनाय।
हिदुन पुरुषोत्तम कियो, तोरि हाथ अरु पाय॥

महाराज, वेदात ने बड़ा ही उपकार किया। सब हिदू ब्रह्म हो गए। किसी को इतिकर्त्तव्यता बाकी ही न रही। ज्ञानी बनकर ईश्वर से विमुख हुए, रूक्ष हुए, अभिमानी हुए और इसी से स्नेहशून्य हो गए। जब स्नेह ही नही तब देशोद्धार का प्रयत्न कहाँ? बस, जय शकर की।

भारतदु०—अच्छा, और किसने-किसने क्या किया?

सत्या० फौ०––महाराज, फिर सतोष ने भी बडा काम किया। राजा-प्रजा सबको अपना चेला बना लिया। अब हिदुओ को खाने मात्र से काम, देश से कुछ काम नही। राज न रहा, पेनशन ही सही। रोजगार न रहा, सूद ही सही। वह भी नही, तो घर ही का सही, 'सतोष परम सुखं', रोटी ही को सराह-सराह के खाते है। उद्यम की ओर देखते ही नही। निरुद्यमता ने भी सतोष को बडी सहायता दी। इन दोनों को बहादुरी का मेडल जरूर मिले। व्यापार को इन्ही ने मार गिराया।

भारतदु०––और किसने क्या किया ?

सत्या० फौ०––फिर महाराज जो धन की सेना बची थी उसको जीतने को भी मैंने बडे बाँके वीर भेजे। अपव्यय, अदालत, फैशन और सिफारिश इन चारों ने सारी दुश्मन की फौज तितिर बितिर कर दी। अपव्यय ने खूब लूट मचाई। अदालत ने भी अच्छे हाथ साफ किए। फैशन ने तो बिल और टोटल के इतने गोले मारे कि अटाधार कर दिया और सिफारिश ने भी खूब ही छकाया। पूरब से पच्छिम और पच्छिम से पूरव तक पीछा करके खूब भगाया। तुहफे, घूस और चदे के ऐसे बम के गोले चलाए कि "बम बोल गई बाबा की चारो दिसा" धूम निकल पड़ी। मोटा भाई बना-बनाकर मूँड लिया। एक तो खुद ही यह सब पॅडिया के ताऊ, उस पर चुटकी बजी, खुशामद हुई, डर दिखाया गया, बराबरी का झगडा उठा, धॉय-धॉय गिनी गई*, वर्णमाला कठ कराई,† बस हाथी के खाए कैथ हो गए। धन की सेना ऐसी भागी कि कब्रो में भी न वची, समुद्र के पार ही शरण मिली।

भारतदु०––और भला कुछ लोग छिपाकर भी दुश्मनों की ओर भेजे थे ?

सत्या० फौ०––हॉ, सुनिए। फूट, डाह, लोभ, भय, उपेक्षा, स्वार्थपरता, पक्षपात, हठ, शोक, अश्रुमार्जन और निर्बलता इन एक दरजन दूती

*सलामी मिली।

†सी० आई० ई० आदि उपाधियाँ मिली।

और दूतो को शत्रुओ की फौज मे हिला-मिलाकर ऐसा पचामृत बनाया कि सारे शत्रु बिना मारे घटा पर के गरुड हो गए। फिर अत मे भिन्नता गई। इसने ऐसा सबको काई की तरह फाडा कि भाषा धर्म, चाल, व्यवहार, खाना, पीना सब एक-एक योजन पर अलग-अलग कर दिया। अब आवे बचा ऐक्य! देखे आ ही के क्या करते है!

भारत दु०—भला भारत का शस्य नामक फौजदार अभी जीता है कि मर गया? उसकी पलटन कैसी है?

सत्या० फौ०—महाराज! उसका बल तो आपकी अतिवृष्टि और अनावृष्टि नामक फौजो ने बिलकुल तोड़ दिया। लाही, कीड़े, टिड्डी और पाला इत्यादि सिपाहियो ने खूब ही सहायता की। बीच मे नील ने भी नील बन कर अच्छा लकादहन किया।

भारत दु०—वाह! वाह! बड़े आनद की बात सुनाई। तो अच्छा तुम जाओ। कुछ परवाह नही, अब ले लिया है। बाकी साकी अभी सपराए डालता हूँ। अब भारत कहाँ जाता है। तुम होशियार रहना और रोग, महर्घ, कर, मद्य, आलस और अंधकार को जरा क्रम से मेरे पास भेज दो।

सत्या० फौ०—जो आज्ञा।

भारतदु०—अब उसको कही शरण न मिलेगी। धन, बल और विद्या तीनो गई। अब किसके बल कूदेगा?

(यवनिका गिरती है)

पटोत्तोलन

———

चौथा अंक

(कमरा अँगरेजी सजा हुआ, मेज, कुरसी लगी हुई। कुरसी पर भारतदुर्दैव बैठा है)

(रोग का प्रवेश)

रोग—(गाता हुआ) जगत सब मानत मेरी आन।

मेरी ही टट्टी रचि खेलत नित सिकार भगवान॥

मृत्यु कलक मिटावत मैं ही मोसम और न आन।

परम पिता हमही वैद्यन के अत्तारन के प्रान॥

मेरा प्रभाव जगतविदित है। कुपथ्य का मित्र और पथ्य का शत्रु मैं ही हूँ। त्रैलोक्य मे ऐसा कौन है जिस पर मेरा प्रभुत्व नही। नजर, श्राप, भूत, प्रेत, टोना, टनमन, देवी-देवता सब मेरे ही नम्मातर है। मेरी ही बदौलत ओझा, दरसनिए, सयाने, पडित, [illegible] लोगो को ठगते है। (आतक से) भला मेरे प्रबल प्रताप को ऐसा कौन है जो निवारण करे। हह! चुँगी की कमेटी सफाई करके मेरा निवारण करना चाहती है, यह नही जानती कि जितनी सडक चौडी होगी उतने ही हम भी "जस जस सुरसा बदन बढावा, तासु दुगुन कपि॰ रूप दिखावा।"

(भारतदुर्दैव को देख कर) महाराज! क्या आज्ञा है?

भारतदु०—आज्ञा क्या है, भारत को चारो ओर से घेर लो।

रोग—महाराज! भारत तो अब मेरे प्रवेश-मात्र से मर जायगा। घेरने का कौन काम है? धन्वतरि और काशिराज दिवोदास का अब समय नही है और न सुश्रुत वाग्भट्ट-चरक ही है। बैदगी अब केवल जीविका के हेतु बची है। काल के बल से औषधो के गुणो और लोगो के प्रकृति मे भी भेद पड गया। बस अब हमे कौन जीतेगा और फिर हम ऐसी सेना भेजेगे जिनका भारतवासियो ने कभी नाम तो सुना ही न होगा; तब भला वे उसका प्रतिकार क्या करेगे! हम भेजेगे विस्फोटक, हैजा, डगू, अपाप्लेक्सी। भला इनको हिंदू लोग क्या

रोकेंगे ? ये किधर से चढाई करते है और कैसे लड़ते है जानेंगे तो हुई नही, फिर छुट्टी हुई। वरच महाराज, इन्ही से मारे जायँगे और इन्ही को देवता करके पूजेगे, यहाँ तक कि मेरे शत्रु डाक्टर और विद्वान इसी विस्फोटक के नाश का उपाय टीका लगाना इत्यादि कहेगे तो भी य सब उसको शीतला के डर से न मानेंगे और उपाय आछत अपने हाथ प्यारे बच्चो की जान लेगे।

भारतदु०—तो अच्छा तुम जाओ। महर्घ और टिकस भी यहाँ आते होंगे सो उनको साथ लिए जाओ। अतिवृष्टि, अनावृष्टि की सेना भी वहाँ जा चुकी है। अनैक्य और अधकार की सहायता से तुम्हे कोई भी रोक न सकेगा। यह लो पान का बीडा लो। (बीडा देता है)

(रोग बीड़ा लेकर प्रणाम करके जाता है)

भारतदु०—सब, अब कुछ चिता नही, चारो ओर से तो मेरी सेना ने उसको घेर लिया, अब कहाँ बच सकता है।

(आलस्य * का प्रवेश)

आलस्य—हहा ! एक पोस्ती ने कहा, पोस्ती ने पी पोस्त नौ दिन चले अढ़ाई कोस। दूसरे ने जवाब दिया, अबे वह पोस्ती न होगा डाक का हरकारा होगा। पोस्ती ने जब पोस्त पी तो या कूँड़ी के उस पार या इस पार ठीक है। एक बारी मे हमारे दो चेले लेटे थे और उसी राह से एक सवार जाता था। पहिले ने पुकारा "भाई सवार सवार, यह पक्का आम टपक कर मेरी छाती पर पडा है, जरा मेरे मुँह मे तो डाल।" सवार ने कहा "अजी तुम बडे आलसी हौ। तुम्हारी छाती पर आम पड़ा है सिर्फ हाथ से उठा कर मुँह मे डालने में यह आलस है !" दूसरा बोला "ठीक है साहब, यह वड़ा ही आलसी है।" रात भर कुत्ता मेरा मुँह चाटा किया और यह पास ही पडा था पर इसने न हाँका।" सच है किस जिदगी के वास्ते तकलीफ उठाना, मजे मे हालमस्त पडे रहना। मुख केवल हम मे है "आलसी पडे कुएँ मे वही चैन है।"

---

* मोटा आदमी जँभाई लेता हुआ धीरे-धीरे आवेगा।

(गाता है)

(गजल)

दुनिया मे हाथ-पैर हिलाना नही अच्छा।
मर जाना पै उठके कही जाना नही अच्छा।।
बिस्तर पर मिस्ले लोथ पडे रहना हमेशा।
बंदर की तरह धूम मचाना नही अच्छा।।
"रहने दो जमी पर मुझे आराम यही है।"
छेड़ो न नक्शेपा है मिटाना नही अच्छा।।
उठ करके घर से कौन चले यार के घर तक।
"मौत अच्छी है पर दिल का लगाना नही अच्छा।।"
धोती भी पहिने जब कि कोई गैर पिन्हा दे।
उमरा को हाथ-पैर चलाना नही अच्छा।।
सिर भारी चीज है इसे तकलीफ हो तो हो।
पर जीभ बिचारी को सताना नही अच्छा।।
फाको से मरिए पर न कोई काम कीजिए।
दुनिया नही अच्छी है जमाना नही अच्छा।।
सिजदे से गर बिहिश्त मिले दूर कीजिये।
दोजख ही सही सिर का झुकाना नही अच्छा।।
मिल जाय हिद खाक मे हम काहिलो को क्या।।
ऐ मीरे-फर्श रज उठाना नही अच्छा।।

और क्या। काजीजी दुबले क्यो, कहै शहर के अदेशे से। अरे 'कोउ नृप होउ हमे का हानी, चेरि छाँडि नहि होउब रानी।' आनद से जन्म बिताना। 'अजगर करै न चाकरी, पंछी करै न काम। दास मलूका कह गए, सबके दाता राम।।' "जो पढतव्यं सो मरतव्यं, जो न पढतव्यं सो भी मरतव्य, तब फिर दतकटाकट किं कर्तव्यं?" भई जात मे ब्राह्मण, धर्म मे वैरागी, रोजगार मे सूद और दिल्लगी मे गप सब से अच्छी। घर बैठे जन्म बिताना, न कही जाना और न कही आना। बस खाना हगना, मूतना, सोना, बात बनाना, तान

मारना और मस्त रहना। अमीर के सर पर और क्या सुरखाब का पर होता है, जो कोई काम न करे वही अमीर। 'तवंगरी बदिलस्त न बमाल।'[१] दोई तो मस्त है या मालमस्त या हालमस्त। (भारत-दुर्दैव को देखकर उसके पास जाकर प्रणाम करके) महाराज ! मै सुख से सोया था कि आपकी आज्ञा पहुँची, ज्यो-त्यो कर यहाँ हाजिर हुआ। अब हुक्म ?

भारत दु०—तुम्हारे और साथी सब हिदुस्तान की ओर भेजे गए है, तुम भी वही जाओ और गपनी जोगनिन्द्रा से सब को अपने वश मे करो।

आलस्य—बहुत अच्छा। (आप ही आप) आह रे बप्पा ! अब हिदुस्तान मे जाना पडा। तब चलो धीरे-धीरे चले। हुक्म न मानेगे तो लोग कहेगे "सरबस खाइ भोग करि नाना, समरभूमि भा दुरलभ प्राना।" अरे करने को दैव आपही करेगा, हमारा कौन काम है, पर चले।

(यही सब बुड़बुडाता हुआ जाता है)

(मदिरा * आती है)

मदिरा—भगवान् सोम की मै कन्या हूँ। प्रथम वेदों ने मधु नाम से मुझे आदर दिया। फिर देवताओ की प्रिया होने से मै सुरा कहलाई और मेरे प्रचार के हेतु श्रौत्रामणि यज्ञ की सृष्टि हुई। स्मृति और पुराणो मे भी प्रवृत्ति मेरी नित्य कही गई। तत्र तो केवल मेरे ही हेतु बने। ससार मे चार मत बहुत प्रबल है, हिद्रू, बौद्ध, मुसलमान और क्रिस्तान। इन चारो मे मेरी चार पवित्र प्रतिमूर्ति विराजमान है। सोमपान, बीराचमन, शराबुन्तहूरा और बापटैजिग वाइन। भला कोई कहे तो इनको अशुद्ध ? या जो पशु है उन्होंने अशुद्ध कहा ही तो क्या हमारे चाहने वालो के आगे वे लोग बहुत होंगे तो फी सैकड़े दस होंगे, जगत् मे तो हम व्याप्त है। हमारे चेले लोग सदा यही कहा करते है। और फिर सरकार के राज्य के तो हम एकमात्र भूपण है।

---

१. अमीरी हृदय से है, धन से नही है।

* सॉवली सी स्त्री, लाल कपडा, सोने का गहना, पैर में घुँघरू।

दूध सुरा दधिहू सुरा, सुरा अन्न धन धाम।
वेद सुरा ईश्वर सुरा, सुरा स्वर्ग को नाम॥
जाति सुरा विद्या सुरा, बिनु मद रहै न कोय।
सुधरी आजादी सुरा, जगत सुरामय होय॥
ब्राह्मण क्षत्री वैश्य अरु, सैयद सेख पठान।
दै बताइ मोहि कौन जो, करत न मदिरा पान॥
पियत भट्ट के ठट्ट अरु, गुजरातिन के वृन्द।
गौतम पियत अनद सों, पियत अग्र के नद॥
होटल मे मदिरा पिये, चोट लगे नहि लाज।
लोट लए ठाढ़े रहत, टोटल देवै काज॥
कोउ कहत मद नहि पियै, तो कछु लिख्यो न जाय।
कोउ कहत हम मद्यबल, करत वकीली आय॥
मद्यहि के परभाव सो, रचत अनेकन ग्रथ।
मद्यहि के परकास सो, लखत धरम को पंथ॥
मद पी विधि जग को करत, पालत हरि करि पान।
मद्यहि पी कै नाश सब, करत शभु भगवान॥
विष्णु बारुणी, पोर्ट पुरुषोत्तम, मद्य मुरारि।
शापिन शिव गौडी गिरिश, ब्राडी ब्रह्म बिचारि॥
मेरी तो धन बुद्धि बल, कुल लज्जा पति गेह।
माय बाप सुत धर्म सब, मदिरा ही न सँदेह॥
सोक-हरन आनँद-करन, उमगावन सब गात।
हरि मै तप-बिनु लय-करनि, केवल मद्य लखात॥
सरकारहि मजूर जो मेरो होत उपाय।
तो सब सो बढि मद्य पै देती कर बैठाय॥
हमही को या राज की, परम निसानी जान।
कीर्ति-खंभ सी जग गडी, जब लौ थिर ससि भान॥
राजमहल के चिह्न नहि, मिलिहै जग इत कोय।
तबहू बोतल टूक बहु, मिलिहै कीरति होय॥

हमारी प्रवृत्ति के हेतु कुछ यत्न करने की आवश्यकता नही। मनु

पुकारते है 'प्रवृत्तिरेषा भूताना' और भागवत मे कहा है 'लोके व्यवाया-मिषमद्यसेवा नित्यास्ति जतोः।' उस पर भी वर्त्तमान समय की सभ्यता की तो मै मुख्य मूलसूत्र हूँ। पच विषयेद्रियों के सुखानुभव मेरे कारण द्विगुणित हो जाते है। सगीत-साहित्य की तो एकमात्र जननी हूँ। फिर ऐसा कौन है जो मुझसे विमुख हो?

(गाती है)

(राग काफी, धनाश्री का मेल, ताल धमार)

मदवा पीले पागल जोबन बीत्यौ जात।
बिनु मद जगत सार कछु नाही मान हमारी बात॥
पी प्याला छक छक आनँद से नितहि साँझ और प्रात।
झूमत चल डगमगी चाल से मारि लाज को लात॥
हाथी मच्छड, सूरज जुगनू जाके पिये लखात।
ऐसी सिद्धि छोडि मन मूरख काहे ठोकर खात॥

(राजा को देखकर) महाराज! कहिए क्या हुक्म है?

भारत दु०—हमने बहुत से अपने वीर हिंदुस्तान मे भेजे है परतु मुझको तुमसे जितनी आशा है उतनी और किसी से नही है। जरा तुम भी हिंदुस्तान की तरफ जाओ और हिंदुओं से समझो तो।

मदिरा—हिंदुओं के तो मै मुद्दत से मुँहलगी हूँ, अब आपकी आज्ञा से और भी अपना जाल फैलाऊँगी और छोटे-बड़े सब के गले का हार बन जाऊँगी। [जाती है

(रगशाला के दीपो मे से अनेक बुझा दिए जायँगे)

(अधकार का प्रवेश)

(आँधी आने की भाँति शब्द सुनाई पड़ता है)

अंधकार—(गाता हुआ स्खलित नृत्य करता है)

(राग काफी)

जै जै कलियुग राज की, जै महामोह महराज की।
अटल छत्र सिर फिरत थाप जग मानत जाके काज की॥
कलह अविद्या मोह मूढता सबै नास के साज की॥

हमारा सृष्टि-संहार-कारक भगवान् तमोगुण जी से जन्म है। चोर, उलूक और लपटों के हम एकमात्र जीवन है। पर्वतों की गुहा, शोकितो के नेत्र, मूर्खो के मस्तिष्क और खलों के चित्त मे हमारा निवास है। हृदय के और प्रत्यक्ष, चारो नेत्र हमारे प्रताप से बेकाम हो जाते है। हमारे दो स्वरूप है, एक आध्यात्मिक और एक आधि-भौतिक, जो लोक मे अज्ञान और अँधेरे के नाम से प्रसिद्ध है। सुनते है कि भारतवर्ष मे भेजने को मुझे मेरे परम पूज्य मित्र दुर्दैव महाराज ने आज बुलाया है। चले देखे क्या कहते है (आगे बढकर) महाराज की जय हो, कहिए, क्या अनुमति है ?

भारतदु०—आओ मित्र ! तुम्हारे बिना तो सब सूना था। यद्यपि मैंने अपने बहुत से लोग भारतविजय को भेजे है पर तुम्हारे बिना सब निर्बल है। मुझको तुम्हारा बडा भरोसा है, अब तुमको भी वहाँ जाना होगा।

अध०—आपके काम के वास्ते भारत क्या वस्तु है, कहिए मै विलायत जाऊँ।

भारत दु०—नही, विलायत जाने का अभी समय नही, अभी वहाँ त्रेता, द्वापर है।

अध०—नही, मैने एक बात कही। भला जब तक वहाँ दुष्टा विद्या का प्राबल्य है, मै वहाँ जाही के क्या करूँगा ! गैस और मैगनीशिया से मेरी प्रतिष्ठा भग न हो जायगी।

भारतदु०—हाँ, तो तुम हिदुस्तान मे जाओ और जिसमे हमारा हित हो सो करो। बस "बहुत बुझाइ तुमहि का कहऊँ, परम चतुर मै जानत अहऊँ।"

अध०—बहुत अच्छा, मै चला। बस जाते ही देखिए क्या करता हूँ।

(नेपथ्य मे बैतालिक गान और गीत की समाप्ति मे क्रम से पूर्ण अधकार और पटाक्षेप)

निहचै भारत को अब नास।
जब महराज विमुख उनसों तुम निज मति करी प्रकास ॥

अब कहुँ सरन तिन्हँ नहि मिलिहै ह्वैहै सब बल चूर।
बुद्धि विद्या धन धान सबै अब तिनको मिलिहै धूर॥
अब नहि राम धर्म अर्जुन नहि शाक्यसिंह अरु व्यास।
करिहै कौन पराक्रम इनमे को दैहे अब आस॥
सेवाजी रनजीतसिंह हूँ अब नहि बाकी जौन।
करिहै कछू नाम भारत को अब तो सब नृप मौन॥
वही उदैपुर जैपुर रीवाँ पन्ना आदिक राज।
परबस भए न सोच सकहि कछु करि निज बल बेकाज॥
अँगरेजहु को राज पाइकै रहे कूढ़ के कूढ़।
स्वारथ-पर विभिन्न-मति-भूले हिंदू सब ह्वै मूढ॥
जग के देस बढ़त बदि-बदि के सब बाजी जेहि काल।
ताहू समय रात इनको है ऐसे ये बेहाल॥
छोटे चित्त अति भीरु बुद्धि मन चचल बिगत उछाह।
उदर-भरन-रत, ईस-बिमुख सब भए प्रजा नरनाह॥
इनसो कछू आस नहि ये तो सब बिधि बुधि-बल-हीन।
बिना एकता-बुद्धि-कला के भए सबहि बिधि दीन॥
बोझ लादि कै पैर छानि कै निज-सुख करहु प्रहार।
ये रासभ से कछु नहि कहिहै मानहु छमा-अगार॥
"हित अनहित पशु पक्षी जाना" पै ये जानहि नाहि।
भूले रहत आपुने रँग मै फँसे मूढ़ता माहि॥
जे न सुनहि हित, भलो करहि नहि तिनसों आसा कौन।
डंका दै निज सैन साजि अब करहु उतै सब गौन॥

(जवनिका गिरती है)

पाँचवाँ अंक

स्थान-किताबखाना

(सात सभ्यो की एक छोटी सी कमेटी, सभापति चक्करदार टोपी पहने, चश्मा लगाए, छडी लिए, छ. सभ्यो मे एक बगाली, एक महाराष्ट्र, एक अखबार हाथ मे लिए एडिटर, एक कवि और दो देशी महाशय)

सभापति—(खड़े होकर) सभ्यगण! आज की कमेटी का मुख्य उद्देश्य यह है कि भारतदुर्दैव की, सुना है कि, हम लोगो पर चढाई है। इस हेतु आप लोगो को उचित है कि मिलकर ऐसा उपाय सोचिए कि जिससे हम लोग इस भावी आपत्ति से बचे। जहाँ तक हो सके अपने देश की रक्षा करना ही हम लोगो का मुख्य धर्म है। आशा है कि आप सब लोग अपनी-अपनी अनुमति प्रगट करेगे। (बैठ गए, करतल-ध्वनि)।

बगाली—(खड़े होकर) सभापति साहब जो बात बोला सो बहुत ठीक है। इसका पेशतर कि भारतदुर्दैव हम लोगो का शिर पर आ पडे कोई उसके परिहार का उपाय शोचना अत्यत आवश्यक है किंतु प्रश्न एई है जे हम लोग उसका दमन करने शाकता कि हमारा बीज्जोंबल के बाहर का बात है। क्यो नही शाकता? अलबत्त शकैगा, परंतु जो शब लोग एक मत्त होगा। (करतलध्वनि) देखो हमारा बगाल मे इसका अनेक उपाय शाधन होते हैं। ब्रिटिश इडियन असोसिएशन लोग इत्यादि अनेक शभा भी होते है। कोई थोडा बी बात होता हम लोग मिल के बडा गोल करते। गवर्नमेंट तो केवल गोलमाल शे भय खाता। और कोई तरह नही शोनता। ओ हुआँ का अखबार वाला सब एक बार ऐसा शोर करता कि गवर्नमेंट को अलबत्त शुनने होता। किंतु हेयाँ, हम देखते है कोई कुछ नही बोलता। आज शब आप सभ्य लोग एकत्र है, कुछ उपाय इसका अवश्य शोचना चाहिए। (उपवेशन)

प० देशी—(धीरे से) यही, मगर जब तक कमेटी मे है तभी तक। बाहर निकले कि फिर कुछ नही!

दू० देशी—(धीरे से) क्यों भाई साहब, इस कमेटी में आने से कमिश्नर हमारा नाम तो दरबार से खारिज न कर देगे?

एडिटर—(खड़े होकर) हम अपने प्राणपण से भारतदुर्दैव को हटाने को तैयार है। हमने पहिले भी इस विषय में एक बार अपने पत्र मे लिखा था परंतु यहाँ तो कोई सुनता ही नही। अब जब सिर पर आफत आई तो आप लोग उपाय सोचने लगे। भला अब भी कुछ नहीं बिगड़ा है जो कुछ सोचना हो जल्द सोचिए। (उपवेशन)

कवि—(खडे होकर) मुहम्मदशाह से भाँडों ने दुश्मन की फौज से बचने का एक बहुत उत्तम उपाय कहा था। उन्होंने बतलाया कि नादिरशाह के मुकाबले में फौज न भेजी जाय। जमना-किनारे कनात खड़ी कर दी जायँ, कुछ लोग चूडी पहिने कनात के पीछे खडे रहे। जब फौज इस पार उतरने लगे, कनात के बाहर हाथ निकाल कर उँगली चमकाकर कहें "मुए इधर न आइयो इधर जनाने है"। बस सब दुश्मन हट जायँगे। यही उपाय भारतदुर्दैव से बचने को क्यो न किया जाय।

बगाली—(खड़े होकर) अलबत्त, यह भी एक उपाय है कितु असभ्यगण आकर जो स्त्री लोगों का विचार न करके सहसा कनात को आक्रमण करेगा तो? (उपवेशन)

एडि०—(खडे होकर) हमने एक दूसरा उपाय सोचा है, एडूकेशन की एक सेना बनाई जाय। कमेटी की फौज। अखबारों के शस्त्र और स्पीचों के गोले मारे जायँ। आप लोग क्या कहते है? (उपवेशन)

दू० देशी—मगर जो हाकिम लोग इससे नाराज हों तो? (उपवेशन)

बगाली—हाकिम लोग काहे को नाराज होगा। हम लोग शदा चाहता कि अगरेज़ों का राज्य उत्सन्न न हो, हम लोग केवल अपना बचाव करता। (उपवेशन)

महा०—परतु इसके पूर्व यह होना अवश्य है कि गुप्त रीति से यह बात जाननी कि हाकिम लोग भारतदुर्दैव की सैन्य से मिल तो नही जायँगे।

दू० देशी—इस बात पर बहस करना ठीक नही। नाहक कही लेने के देने न पडे, अपना काम देखिए। (उपवेशन और आप ही आप) हॉ, नही तो अभी कल ही झाडबाजी होय।

महा०—तो सार्वजनिक सभा का स्थापन करना। कपडा बीनने की कल मॅगानी। हिंदुस्तानी कपडा पहिनना। यह भी सब उपाय है।

दू० देशी—(धीरे से) बनात छोडकर गंजी पहिरेंगे, हे हे।

एडि०—परंतु अब समय थोडा है जल्दी उपाय सोचना चाहिए।

कवि—अच्छा तो एक उपाय यह सोचो कि सब हिंदू मात्र अपना फैशन छोडकर कोट-पतलून इत्यादि पहिरे जिसमे जब दुर्दैव की फौज आवे तो हम लोगो को योरोपियन जानकर छोड दे।

प० देशी—पर रग गोरा कहॉ से लावेगे?

बगाली—हमारा देश मे भारतउद्धार नामक एक नाटक बना है। उसमे अगरेजों को निकाल देने का जो उपाय लिखा, सोई हम लोग दुर्दैव का वास्ते काहे न अवलंबन करे। ओ लिखता पॉच जन बंगाली मिल के ॲगरेजों को निकाल देगा। उसमे एक तो पिशान लेकर स्वेज का नहर पाट देगा। दूसरा बाँस काट-काट के पिवरी नामक जलयत्र विशेष बनावेगा। तीसरा उस जलयत्र से ॲगरेजो की ऑख मे धूर और पानी डालेगा।

महा०—नही नही, इस व्यर्थ की बात से क्या होना है। ऐसा उपाय करना जिससे फलसिद्धि हो।

प० देशी—(आप ही आप) हाय! यह कोई नही कहता कि सब लोग मिलकर एक-चित्त हो विद्या की उन्नति करो, कला सीखो, जिससे वास्तविक कुछ उन्नति हो। क्रमश सब कुछ हो जायगा।

एडि०—आप लोग नाहक इतना सोच करते है, हम ऐसे-ऐसे आर्टिकिल लिखेगे कि उसके देखते ही दुर्दैव भागेगा।

कवि—और हम ऐसी ही ऐसी कविता करेगे।

प० देशी—पर उनके पढने का और समझने का अभी सस्कार किसको है?

(नेपथ्य मे से)

भागना मत, अभी मै आती हूँ।

(सब डरके चौकन्ने से होकर इधर-उधर देखते हैं

दू० देशी—(बहुत डरकर) बाबा रे, जब हम कमेटी मे चले थे तब पहिले ही छीक हुई थी। अब क्या करे। (टेबुल के नीचे छिपने का उद्योग करता है)।

(डिसलायल्टी * का प्रवेश)

सभापति—(आगे से ले आकर बड़े शिष्टाचार से) आप क्यों यहाँ तशरीफ लाई है? कुछ हम लोग सर्कार के विरुद्ध किसी प्रकार की सम्मति करने को नही एकत्र हुए है। हम लोग अपने देश की भलाई करने को एकत्र हुए हैं।

डिसलायलटी—नही, नहीं, तुम सब सर्कार के विरुद्ध एकत्र हुए हो, हम तुमको पकड़ेगे।

बगाली—(आगे वढकर क्रोध से) काहे को पकड़ेगा, कानून कोई वस्तु नहीं है। सर्कार के विरुद्ध कौन बात हम लोग बोला? व्यर्थ का विभीषिका!

डिस०—हम क्या करे, गवर्नमेंट की पालिसी यही है। कवि-वचन-सुधा नामक पत्र मे गवर्नमेंट के विरुद्ध कौन बात थी? फिर क्यो उसके पकड़ने को हम भेजे गए? हम लाचार है।

दू० देशी—(टेबुल के नीचे से रोकर) हम नही, हम नही, हम तमाशा देखने आए थे।

महा०—हाय-हाय! यहाँ के लोग बड़े भीरु और कापुरुष है। इसमें भय की कौन बात है! कानूनी है।

सभा०—तो पकड़ने का आपको किस कानून से अधिकार है?

डिस०—इँगलिश पालिसी नामक ऐक्ट के हाकिमेच्छा नामक दफा से।

महा०—परंतु तुम?

दू० देशी—(रोकर) हाय-हाय! भटवा तुम कहता है अब मरे।

---

* पुलिस की वर्दी पहिने।

महा०—पकड़ नही सकती, हमको भी दो हाथ दो पैर है। चलो हम लोग तुम्हारे सग चलते है, सवाल-जवाब करेगे।

बंगाली—हॉ चलो, ओ का बात—पकडन नही शेकता।

सभा०—(स्वगत) चेयरमैन होने से पहिले हमी को उत्तर देना पड़ेगा, इसीसे किसी बात मे हम अगुआ नही होते।

डिस०—अच्छा चलो। (सब चलने की चेष्टा करते है)।

(जवनिका गिरती है)

छठा अंक

स्थान गंभीर वन का मध्यभाग

(भारत एक वृक्ष के नीचे अचेत पड़ा है)

(भारतभाग्य का प्रवेश)

भारतभाग्य——(गाता हुआ——राग चैती गौरी)

जागो जागो रे भाई !
सोअत निसि बैस गँवाई जागो जागो रे भाई ॥
निसि की कौन कहै दिन बीत्यो काल राति चलि आई ।
देखि परत नहि हित-अनहित कछु परे बैरि-बस जाई ॥
निज उद्धार पथ नहिं सूझत सीस धुनत पछिताई ।
अबहूँ चेति, पकरि राखो किन जो कछु बची बड़ाई ॥
फिर पछिताए कछु नहि ह्वैहै रहि जैहौ मुँह बाई ।
जागो जागो रे भाई ॥

(भारत को जगाता है ओर भारत जब नही जागता तब अनेक यत्न से फिर जगाता है, अत मे हारकर उदास होकर) ।

हाय ! भारत को आज क्या हो गया है ? क्या निस्सदेह परमेश्वर इससे ऐसा ही रूठा है ? हाय क्या अब भारत के फिर वे दिन न आवेंगे। हाय यह वही भारत है जो किसी समय सारी पृथ्वी का शिरोमणि गिना जाता था ?

भारत के भुज-बल जग रक्षित ।
भारत विद्या लहि जग सिच्छित ॥
भारत तेज जगत बिस्तारा ।
भारत भय कँपत ससारा ॥
जाके तनिकहिं भौह हिलाए ।
थर-थर कंपत नृप डरपाए ॥

जाके जय की उज्ज्वल गाथा।
गावत सब महि मगल साथा॥
भारत किरिन जगत उँजियारा।
भारत जीव जिअत ससारा॥
भारत वेद कथा इतिहासा।
भारत वेद प्रथा परकासा॥
फिनिक मिसिर सीरीय युनाना।
भे पडित लहि भारत दाना॥
रह्यौ रुधिर जब आरज-सीसा।
ज्वलित अनल समान अवनीसा॥
साहस बल इन सम कोउ नाही।
तबै रह्यौ महिमडल माही॥
कहा करी तकसीर तिहारी।
रे बिधि रुष्ट याहि की बारी॥
सबै सुखी जग के नर-नारी।
रे बिधना भारत हि दुखारी॥
हाय रोम तू अति बडभागी।
बर्बर तोहि नास्यो जय लागी।
तोड़े कीरति-थभ अनेकन।
ढाहे गढ बहु करि प्रण टेकन॥
मदिर महलनि तोरि गिराए।
सबै चिह्न तुव धूरि मिलाए॥
कछु न बची तुव भूमि निसानी।
सो बरु मेरे मन अति मानी॥
भारत भाग न जात निहारे।
थाप्यो पग ता सीस उघारे॥
तोरचो दुर्गन महल ढहायो।
तिनही में निज गेह बनायो॥

ते कलक सब भारत केरे।
ठाढे अजहूँ लखो घनेरे॥
काशी प्राग अयोध्या नगरी।
दीन रूप सम ठाढी सगरी॥
चडालहु जेहि निरखि घिनाई।
रहीं सबै भुव मुंह मसि लाई॥
हाय पचनद हा पानीपत।
अजहुँ रहे तुम धरनि बिराजत॥
हाय चितौर निलज तू भारी।
अजहुँ खरो भारतहि मँझारी॥
जा दिन तुव अधिकार नसायो।
सो दिन क्यो नहि धरनि समायो॥
रह्यो कलक न भारत नामा।
क्यों रे तू बारानसि धामा॥
सब तजि कै भजि कै दुखभारो।
अजहुँ बसत करि भुव मुख कारो॥
अरे अग्रवन तीरथराजा।
तुमहुँ बचे अबलौ तजि लाजा॥
पापिनि सरजू नाम धराई।
अजहूँ बहत अवधतट जाई॥
तुम मे जल नहि जमुना गगा।
बढहु बेग करि तरल तरंगा॥
धोवहु यह कलंक की रासी।
बोरहु किन झट मथुरा कासी॥
कुम कन्नौज अंग अरु बंगहि।
बोरहु किन निज कठिन तरंगहि॥
बोरहु भारत भूमि सबेरे।
मिटै करक जिय की तब मेरे॥

अहो भयानक भ्राता सागर।
तुम तरंगनिधि अति बल-आगर॥
बोरे बहु गिरि बन अस्थाना।
पै बिसरे भारत हित जाना॥
बढ़हु न बेगि धाइ क्यों भाई।
देहु भरत भुव तुरत डुबाई॥
घेरि छिपावहु विंध्य हिमालय।
करहु सकल जल भीतर तुम लय॥
धोवहु भारत अपजस पंका।
मेटहु भारतभूमि कलंका॥

हाय ! यहीं के लोग किसी काल मे जगन्मान्य थे।

जेहि छिन बलभारे हे सबै तेग धारे।
तब सब जग धाई फेरते हे दुहाई॥
जग सिर पग धारे धावते रोस भारे।
बिपुल अवनि जीती पालते राजनीती॥
जग इन बल काँपै देखिकै चंड दापै।
सोइ यह प्रिय मेरे ह्वै रहे आज चेरे॥
ये कृष्ण-बरन जब मधुर तान।
करते अमृतोपम बेद-गान॥
तब मोहत सब नर-नारि-वृन्द।
सुनि मधुर बरन सज्जित सुछंद॥
जग के सबही जन धारि स्वाद।
सुनते इनही को बीन नाद॥
इनके गुन होतो सबहि चैन।
इनही कुल नारद तानसैन॥
इनहीं के क्रोध किए प्रकास।
सब काँपत भूमंडल अकास॥
इनही के हुङ्कृति शब्द घोर।

गिरि काँपत हे सुनि चारु ओर ॥
जब लेत रहे कर मे कृपान।
इनही कहँ हो जग तृन समान ॥
सुनि कै रनबाजन खेत माहि।
इनही कहँ हो जिय सक नाहि ॥
याही भुव महँ होत है हीरक आम कपास।
इतही हिमगिरि गंगजल काव्य गीत परकास ॥
जाबाली जैमिनि गरग पातंजलि सुकदेव।
रहे भारतहि अंक में कबहिं सबै भुवदेव।
याही भरत मध्य में रहे कृष्ण मुनि व्यास।
जिनके भारत-गान सो भारत-बदन प्रकास ॥
याही भारत में रहे कपिल सूत दुरवास।
याही भारत में भए शाक्य सिंह संन्यास ॥
याही भारत मे गए मनु भृगु आदिक होय।
तब तिनसों जग मे रह्यो घृना करत नहिं कोय ॥
जासु काव्य सो जगत मधि अब लौ ऊँचो सीस।
जासु राज बल धर्म की तृपा करहिं अवनीस ॥
सोई व्यास अरु राम के बंस सबै सन्तान।
ये मेरे भारत भरे सोइ गुन रूप समान ॥
सोई बंस रुधिर वही सोई मन बिस्वास।
वही वासना चित वही आसय वही विलास ॥
कोटि कोटि ऋषि पुन्य तन कोटि कोटि अति सूर।
कोटि कोटि बुध मधुर कवि मिले यहाँ की धूर ॥
सोइ भारत की आज यह भई दुरदसा हाय।
कहा करैं कित जायँ नहिं सूझत कछू उपाय ॥

(भारत को फिर उठाने की अनेक चेष्टा करके उपाय निष्फल होने पर रोकर) हा! भारतवर्ष को ऐसी मोहनिद्रा ने घेरा है कि अब इसके उठने की आशा नहीं। सच है, जो जान-बूझकर सोता है उसे कौन जगा

सकेगा ? हा दैव ! तेरे विचित्र चरित्र है, जो कल राज करता था वह आज जूते मे टाँका उधार लगवाता है। कल जो हाथी पर सवार फिरते थे आज नंगे पाँव बन-बन की धूल उडाते फिरते है। कल जिनके घर लडके-लडकियों के कोलाहल से कान नही दिया जाता था, आज उनका नाम लेवा और पानी देवा कोई नही बचा और कल जो घर अन्न धन पूत लक्ष्मी हर तरह से भरे-पूरे थे आज उन घरो मे तूने दिया बालनेवाला भी नही छोडा।

हा ! जिस भारतवर्ष का सिर व्यास, वाल्मीकि, कालिदास, पाणिनि, शाक्यसिह, बाणभट्ट प्रभृति कवियो के नाममात्र से अब भी सारे ससार से ऊँचा है, उस भारत की यह दुर्दशा ! जिस भारतवर्ष के राजा चंद्रगुप्त और अशोक का शासन रूम-रूस तक माना जाता था, उस भारत की यह दुर्दशा ! जिस भारत मे राम, युधिष्ठिर, नल, हरिश्चद्र, रंतिदेव, शिवि इत्यादि पवित्र चरित्र के लोग हो गए है उसकी यह दशा ! हाय, भारत भैया, उठो ! देखो विद्या का सूर्य पश्चिम से उदय हुआ चला आता है। अब सोने का समय नही है। अँगरेज का राज्य पाकर भी न जगे तो कब जागोगे। मूर्खो के प्रचड शासन के दिन गए, अब राजा ने प्रजा का स्वत्व पहिचाना। विद्या की चरचा फैल चली, सबको सब कुछ कहने-सुनने का अधिकार मिला, देश-विदेश से नई नई विद्या और कारीगरी आई। तुमको उस पर भी वही सीधी बाते, भाँग के गोले, ग्रामगीत, वही बाल्यविवाह, भूत-प्रेत की पूजा, जन्मपत्री की विधि ! वही थोडे मे सतोष, गप हाँकने मे प्रीति और सत्यानाशी चाले ! हाय अब भी भारत की यह दुर्दशा ! अरे अब क्या चिता पर सम्हलेगा। भारत भाई ! उठो, देखो, अब यह दुःख नही सहा जाता, अरे कब तक बेसुध रहोगे ? उठो, देखो, तुम्हारी सतानों का नाश हो गया। छिन्न-भिन्न होकर सब नरक की यातना भोगते है, उसपर भी नही चेतते। हाय ! मुझसे तो अब यह दशा नही देखी जाती। प्यारे जागो। (जगाकर और नाड़ी देखकर) हाय इसे तो बड़ा ही ज्वर चढा है ! किसी तरह होश में नही आता। हा भारत !

तेरी क्या दशा हो गई! हे करुणासागर भगवान् इधर भी दृष्टि कर। हे भगवती राजराजेश्वरी, इसका हाथ पकड़ो। (रोकर) अरे कोई नही जो इस समय अवलम्ब दे। हा! अब मै जीके क्या करूँगा? जब भारत ऐसा मेरा मित्र इस दुर्दशा में पड़ा है और उसका उद्धार नही कर सकता, तो मेरे जीने पर धिक्कार है! जिस भारत का मेरे साथ अब तक इतना सम्बन्ध था उसकी ऐसी दशा देखकर भी मै जीता रहूँ तो बड़ा कृतघ्न हूं! (रोता है) हा विधाता, तुझे यही करना था! (आतंक से) छिः छिः इतना क्लैव्य क्यो? इस समय यह अधीरजपना! बस, अब धैर्य! (कमर से कटार निकालकर) भाई भारत! मै तुम्हारे ऋण से छूटता हूं। मुझसे वीरो का कर्म नही हो सकता। इसीसे कातर की भांति प्राण देकर उऋण होता हूं। (ऊपर हाथ उठाकर) हे सर्व्वांतर्यामी! हे परमेश्वर! जन्म-जन्म मुझे भारत सा भाई मिले! जन्म जन्म गंगा-यमुना के किनारे मेरा निवास हो!

(भारत का मुँह चूमकर और गले लगाकर)

भैया, मिल लो, अब मैं विदा होता हूं। भैया, हाथ क्यों नही उठाते? मैं ऐसा बुरा हो गया कि जन्म भर के वास्ते मै विदा होता हूँ तब भी ललककर मुझसे नहीं मिलते। मैं ऐसा ही अभागा हूं तो ऐसे अभागे जीवन ही से क्या, बस यह लो। (कटार का छाती मे आघात और साथ ही जवनिका पतन)

टिप्पणी

मंगलाचरण——मगलाचरण या नादी एक प्रकार की स्तुति है जो विघ्न-शाति के लिए की जाती है। भारतीय नाटच-शास्त्र के अनुसार प्रत्येक नाटच-कृति का प्रारभ और अत ऐसे ही मंगल वाक्यो से माना गया है। मंगलाचरण या नांदी पूर्वरग नामक नाटकीय भूमिका के अतर्गत है। मगलाचरण तीन प्रकार का माना जाता है——(१) वस्तुनिर्देशात्मक (२) नमस्कारात्मक और (३) आशीर्वादात्मक। जहाँ 'जय' शब्द का प्रयोग होता है वहाँ आशीर्वादात्मक मंगलाचरण समझना चाहिए। नाटचकृति के अंत में आने वाले मंगल-पाठ को 'भरत-वाक्य' कहते हैं।

'भारत-दुर्दशा' का यह मंगलाचरण केवल स्तुति के रूप मे है, न कि प्राचीन परंपरा के अनुसार नाटकीय भूमिका के अंग के रूप मे, क्योकि इस मगल-पाठ के अनंतर सूत्रधार-प्रवेश आदि कुछ भी नही है।

सतजुग——भारतीय पौराणिक परंपरा के अनुसार माने जाने वाले चार युगों में से पहला युग। अन्य युग है——त्रेता, द्वापर और कलि। चारो मिलाकर चतुर्युग के नाम से प्रसिद्ध है। देवताओं के १२००० वर्षो में चारों युग एकबार बीत जाते है।

देवताओं के वर्ष	मनुष्यों के वर्ष	
४०००	१७२८०००	= सतयुग
३०००	१२९६०००	= त्रेतायुग
२०००	८६४०००	= द्वापरयुग
१०००	४३२०००	= कलियुग

क्रमश· ८००, ६००, ४०० और २०० वर्षो के सध्यांश होते है ओर १००० चतुर्युग जब पूर्ण हो जाते है तो ब्रह्मा जी का एक दिन होता है।

म्लेच्छ——सीमा के पार रहनेवाले लोग अथवा ऐसी जाति जिसमे भारतीय वर्णाश्रम धर्म प्रचलित न हो। 'यवन' शब्द की भाँति 'म्लेच्छ' शब्द का प्रयोग भी विभिन्न समयो मे विभिन्न जातियों के लिए हुआ है।

बाहर से आए हुए जिन आक्रमणकारियों ने क्रूरता और अत्याचार का व्यवहार किया उन्ही को इन नामो से विभूषित किया गया। हूण भी म्लेच्छ कहलाते थे और आगे चल कर मुसलमान और अँगरेज भी म्लेच्छ कहलाए।

अचार—आचार, रहन-सहन।

कर—हाथ।

कृष्ण—श्याम वर्णवाला।

कल्कि—विष्णु के दस अवतारो मे से अतिम अवतार। रग श्याम, अश्वारूढ और हाथ मे तलवार लिए हुए। सभल (मुरादाबाद) में एक कुमारी कन्या के गर्भ से यह अवतार होगा। यह अवतार कलिकुल, वेदविमुखो, पाखडियों और म्लेच्छादि का ध्वस कर पृथ्वी का उद्धार करेगा। एक 'कल्कि पुराण' भी प्रसिद्ध है। भारतेन्दु की इस कृति मेक लि की सेना का उल्लेख हुआ है। उसे नष्ट करने के लिए कलि-काल मे कल्कि का स्मरण करना उचित ही है।

अवतार—विष्णु के अवतारो का प्रधान कारण यह बताया जाता है कि एक बार विष्णु ने भृगु मुनि के यज्ञ की रक्षा करने की प्रतिज्ञा की। जब भृगु यज्ञ करने लगे तो इसी बीच मे देवताओ और दैत्यों का सग्राम होने लगा। तब इन्द्र की रक्षा के लिए विष्णु यज्ञ छोड कर चले गए और पापी दानवो ने भृगु का यज्ञ विध्वस कर डाला। उस समय भृगु ने विष्णु को शाप दिया कि तुम मलिन हो मर्त्यलोक मे दस बार अवतार लो और मनुष्यो की भाँति नाना प्रकार के दुःख भोगो। तब से जनार्दन मर्त्यलोक मे जन्म लेकर नाना प्रकार के कर्मो का फल भोगते है। विष्णु के इन अवतारों के नाम है—मत्स्य, वाराह, कूर्म, नृसिह, वामन, परशुराम, राम, कृष्ण, बुद्ध और कल्कि।

———

पहिला अंक

अंक—नाटकीय कथावस्तु के विभाजन के नाम अक है।

बीथी (वीथी)—मार्ग, सड़क।

ोगी—भारतीय सस्कृति का प्रतीक। भारतीय अधोगति का वर्णन इसलिए योगी के ही मुख से कराया है।

लावनी—एक गान। प्रसिद्ध लावनी-रचयिता काशीगिरि बनारसी परमहस आशक हक्कानी (उन्नीसवी शती उत्तरार्द्ध) लावनी की उत्पत्ति के विषय मे लिखते है:—

'कोई इसको लावनी कहते है और कोई मरहटी वा ख्याल कहते है। असल मे इसका बनाना और गाना दक्षिण से उत्पन्न है और इसके दो कर्ता हुए एक का नाम तुकनगिरि और दूसरे का नाम शाहअ़ली था। उन्होने दो मत खडे किये तुर्रा और कलॅगी। तुकनगिर तुर्रे को बडा कहते थे और शाहअ़ली कलॅगी को बड़ा रखते थे। आपस मे विवाद किया करते थे और अपना अपना पन्थ उन्होने चलाया। यहाँ तक कि आज ताई उनके मतवाले बहुत से लोग इस देश मे भी बनाते गाते है उनमे पढे-लिखे भी है.......'

इसकी प्रत्येक पक्ति मे २२-२२ मात्राएँ है।

रूप, रंग, रस—रूप = सूरत, शक्ल। रग = वर्ण। रस = सारतत्व, आनद। अर्थात् भारतवर्ष जो सबसे उन्नतिशील हो सभ्यता के मार्ग पर अग्रसर हुआ।

भीनो—भर गया। रसभीनो—शब्दार्थ, यौवनारभ।

शाक्य—एक प्राचीन क्षत्रिय जाति जो नैपाल की तराई मे बसती थी। शाक्यवशीय कुमार सिद्धार्थ जो गौतम बुद्ध के नाम से प्रसिद्ध हुए।

हरिश्चंद्र—सूर्यवशी सत्यव्रत के पुत्र। उनके पुत्र नही था। उन्होने गुरु वशिष्ठ के आदेशानुसार वरुण की आराधना की। वरुण ने इस शर्त पर पुत्र देना स्वीकार किया कि उसकी पशु-रूप में बलि दी जाय।

पुत्र की उत्पत्ति हुई और वह अपने बारे मे कथा सुन भाग गया। वरुण के शाप से राजा को जलोदर रोग हो गया। अत मे शुनःशेप नामक खरीदे हुए बालक को लेकर यज्ञ करना निश्चित हुआ। किन्तु विश्वामित्र द्वारा बताए गए मत्र से वरुण प्रसन्न हुए और बिना वध किए यज्ञ पूरा हो गया। राजा स्वस्थ हो गया और पुत्र भी वापिस चला आया।

सूर्यवश का एक और अट्ठाईसवॉ राजा हरिश्चन्द्र हुआ जो त्रिशकु का पुत्र था और रामचन्द्र से ३५ पीढी पहले हुआ था। यह राजा अत्यन्त दानी, कष्ट सहिष्णु, न्याय-प्रिय और सत्यवादी प्रसिद्ध हुआ। भारतेन्दु जी का सकेत इसी राजा हरिश्चन्द्र की ओर है। 'सत्य हरिश्चन्द्र' नाटक भी भारतेन्दु ने लिखा था। इस राजा के चरित्र की ओर वे विशेष रूप से आकृष्ट थे।

नहुष—अयोध्या का एक प्राचीन इक्ष्वाकुवशीय राजा जो अबरीष के पुत्र और ययाति के पिता थे।

ययाति—राजा नहुष के पुत्र जिनका विवाह शुक्राचार्य की कन्या देवयानी से हुआ था।

राम—दशरथ-नदन राम और रामायण के नायक। विष्णु के अवतार और वीरता, मर्यादा तथा शील के लिए प्रसिद्ध।

युधिष्ठिर—धर्म से उत्पन्न पाण्डु और कुती के ज्येष्ठ पुत्र। अपनी सत्य-निष्ठा के लिए प्रसिद्ध।

वासुदेव—वसुदेव के पुत्र श्रीकृष्ण। चौसठों कलावतार, दुष्टदलन और गीता का उपदेश देने वाले।

सर्याती—शर्याति। (१) एक राजा का नाम जिसकी कन्या 'सुकन्या' महर्षि च्यवन को ब्याही गई थी। (२) भागवत के अनुसार वैवस्वत मनु के एक पुत्र का नाम।

भीम—वायु से उत्पन्न पाण्डु और कुती के द्वितीय पुत्र। अपने शारीरिक बल के लिए प्रसिद्ध।

करन—कर्ण। कुती की कुमारी अवस्था मे सूर्य से उत्पन्न और बाद मे

सूत द्वारा पालित-पोपित। दान और वीरता के लिए प्रसिद्ध।

अर्जुन—इन्द्र से उत्पन्न पाडु और कुती के तृतीय पुत्र। श्रीकृष्ण के सखा और प्रसिद्ध गाण्डीवधारी धनुर्धर।

राती—रँगी हुई, छाई हुई।

वैदिक-जैन—वैदिक मतावलबियो और जैन मतावलबियो मे काफी मतभेद रहता था। जैन धर्म के प्रवर्तक महावीर स्वामी माने जाते है।

डुबाई पुस्तक सारी—समस्त धार्मिक ग्रन्थो को कलक लगा दिया, उनकी मर्यादा नष्ट कर दी।

करि कलह. . . . भारी—आपस की फूट से विदेशी आक्रमणकारियो को आक्रमण करने के लिए प्रलोभन दिया।

अंध-पंगु—ज्ञान के प्रकाश से हीन और गतिहीन (जिनकी गति अवरुद्ध हो गई हो)।

अँगरेज राज . . .ख्वारी—अगरेजो के आने से नवीन शिक्षा का सूत्रपात हुआ और फलत. सुधारवादी धार्मिक, सामाजिक और राजनीतिक आन्दोलन उठ खड़े हुए और भारतीय नवोत्थान का जन्म हुआ। नवोत्थान की भावना से प्रेरित हो भारतवासी अपने जीवन का पुनस्संस्कार करने लगे। लूट-मार, अपहरण आदि का निवारण हुआ। वैज्ञानिक आविष्कारों, जैसे, रेल, तार, डाक, प्रेस, नल आदि का प्रचार हुआ। इन सब कारणो से भारतीय जीवन मे प्रत्यक्षत. सुख-सम्पन्नता आई। किन्तु अँगरेजों की पूँजीवादी-साम्राज्यवादी नीति के फलस्वरूप भारतीय धन विदेश जाने लगा और देश की निर्धनता दिन पर दिन बढने लगी।

मंहगी . . बिस्तारी—अँगरेजो की आर्थिक नीति के अतिरिक्त भारतवासी तेजी, दुर्भिक्ष (काल=अकाल) और विविध प्रकार की बीमारियो से भी पीडित रहते थे। जड मे अँगरेजो की आर्थिक नीति ही थी।

टिक्कस—टैक्स।

दूसरा अंक

श्मशान .. पड़ी है—भारत की उजडी हुई अवस्था के लिए यही पीठिका उपयुक्त हो सकती थी।

कृष्णचन्द्र का दूतत्व—महाभारत-युद्ध के प्रारभ होने से पूर्व युधिष्ठिर की ओर से श्रीकृष्ण दूत बनकर आए थे और दुर्योधन से पाडवो को केवल पाँच गाँव ही देने के लिए कहा था।

वीरोत्तम दुर्योधन—दुर्योधन दुष्ट भले ही रहा हो, किन्तु वह वीर था। गदायुद्ध मे वह भीमसेन से किसी भी प्रकार कम न था। वीरोत्तम इसलिए भी कहा क्योकि उसमे भूमि-प्रेम था। कृष्ण के दूतत्व करने पर भी उसने अपने राज्य की कण भर भूमि भी नही दी थी।

"शूच्यग्रं नैव दास्यामि विना युद्धेन केशव"—हे केशव ! बिना युद्ध के सुई की नोक की बराबर भी (भूमि) नही दूँगा।

पामर जयचन्द्र—भारत मे फूट तथा कलह और फलत. विनाश का प्रतीक। कन्नौज का राजा जयचन्द्र (१२ वी शती के लगभग अत मे)। कहा जाता है कि पृथ्वीराज द्वारा बारबार पराजित होने के फल-स्वरूप उत्पन्न वैमनस्य के कारण उसने शहाबुद्दीन गौरी को भारत पर आक्रमण करने के लिए निमत्रण दिया था।

मातः. . . अपनाए की लाज रक्खो—यहाँ 'राजराजेश्वरी' से विक्टोरिया का तात्पर्य है। भारतेन्दु के समय मे 'राजा कृष्ण समान' वाली भावना कार्य कर रही थी। भारतेन्दु ने भारत में अगरेज़ कर्मचारियो से पीडित होने का उल्लेख किया है, किन्तु सम्राज्ञी के प्रति भक्ति प्रकट की है। वे चाहते थे कि जिस प्रकार इगलैंड का नरेश इगलैंड-निवासियों के हित की इच्छा से शासन करता है, वैसे भारतवासियो के शासन की व्यवस्था हो। इसलिए जब इगलैंड की सम्राज्ञी ने भारत के शासन की बागडोर अपने हाथ में ले ली ('५७ के विद्रोह और विक्टोरिया के घोषणा-पत्र के बाद) तो उन्हे भारतवासियो के

उदय का ध्यान रखकर अपने शरण मे लेने को सार्थक करना चाहिए।

दुखी मन को...बचानेवाला नहीं—अर्थात् अँगरेजी राज्य मे, सब प्रकार की विघ्नबाधाओ और यातनाओ से मुक्त रहते हुए, विद्याध्ययन कर जीवन को सुखी बनावेगे, किन्तु भाग्य मे यह भी नही था।

दुखगाथ—दुख की गाथा अर्थात् कहानी (भारत के दुर्दिन की कहानी)।

टकरावत निज माथ—अर्थात् मारा-मारा फिरता है।

छीजत—क्रमशः नष्ट होता है।

धाइ—दौड़ कर।

नेपथ्य—नृत्य, अभिनय आदि के समय परदे के भीतर का वह स्थान जहाँ अभिनेता वेश सजाते है। नेपथ्य से विविध प्रकार की ध्वनियाँ प्रकट की जाती है और सूचनाएँ दी जाती है।

मुँह बाए—मुँह खोले हुए या फैलाए हुए।

कौर—ग्रास।

परमेश्वर...समुद्र पार—परमेश्वर बैकुठ मे होने के कारण नही सुनता (सुनता तो इतनी दुर्दशा क्यों होती) और सात समुद्र पार होने के कारण राजराजेश्वरी विक्टोरिया नही सुनती (क्योकि उनके प्रतिनिधि शासक अपने मन की करते है, प्रजा के हित का ध्यान नही रखते)।

निर्लज्जता—लज्जा का त्याग, अर्थात् अपमानित होते हुए भी मजे से रहने की अवस्था।

आछत—रहते हुए।

एक जिंदगी...नेआमत है—नेआमत (अ०)=धन, माल। अर्थात् जीवित रहना ही एक परम लक्ष्य हो, फिर चाहे जिस अवस्था मे रहना पड़े।

तीसरा अंक

भारत दुर्दैव तथा उसकी फौज—भारत जो एक समय सभ्यता के सर्वोच्च शिखर पर था उसी का आज पतन हो गया, यह दुर्दैव है। निरुद्यमता, फूट, कलह, रोग, मँहगी, अविद्या, सतोष, अपव्यय, दूसरों का अन्धानुकरण, विज्ञान का अभाव, निज भाषा और वस्तुओ के व्यवहार का अभाव आदि कारण ही दुर्दैव की फौज है।

छार-खार—खाक, धूल अर्थात् नष्ट-भ्रष्ट।

सहज—सरल, सुगम अर्थात् साधारण व्यक्ति।

राक्षस—दैत्य, दुष्ट प्राणी।

काल—अकाल, दुर्भिक्ष।

पानी उलटा कर बरसाऊँ—उलटा कर=औधा कर अर्थात् अतिवृष्टि। इसका एक और अर्थ 'विपरीत गति से पानी बरसाना' भी हो सकता है, अर्थात् जब पानी की आवश्यकता हो तब तो अनावृष्टि और जब आवश्यकता न हो तो अतिवृष्टि।

काफिर—मुसलमानों के अनुसार उनसे भिन्न धर्म का माननेवाला। उन्होने ही यह नाम भारतवासियों को दिया था। यह नाम भारतवासियो की दासता का प्रतीक है।

काला—यह नाम अँगरेजो का दिया हुआ है। यह भी भारत की दासता का प्रतीक है।

तोड़ूँ पैर और हाथ—पगु या निरुद्यम बना दूँ।

मरी—महामारी, प्लेग।

तस्सा—चमडे का टुकडा।

भला हमारे...चौपट करता हूँ—अंगरेजी राज्य मे नवीन शिक्षा और वैज्ञानिक आविष्कारो के प्रचार तथा विविध ज्ञान-विज्ञान के अध्ययन से भारतवासियों को प्रगति के मार्ग पर अग्रसर होने का उत्तम अवसर मिला था। किन्तु उन्होने अगरेजो के ज्ञान-विज्ञान-संबंधी प्रेम, उनके चरित्र, अनुशासन, सगठन-शक्ति, साहस, भाषा-साहित्य-प्रेम, देश-प्रेम आदि का अनुकरण न कर फैशन, मद्यपान, अपने आचार-विचारों को

छोड़कर पश्चिम का अन्धानुकरण आदि बाते ग्रहण की। कुछ पढ़े-लिखे लोग देश की उन्नति करना चाहते थे, किन्तु उनकी सख्या बहुत कम थी; वे चारो ओर अज्ञान और अविद्या के घनान्धकार से घिरे हुए थे। ऐसे सुधारकों को सरकार भी सदेह की दृष्टि से देखती थी।

डिसलायल्टी—राजद्रोह। अगरेज सरकार समझती थी कि जो लोग देश मे ज्ञान का प्रचार और सुधार करना चाहते है वे राष्ट्रीयता के पोषक और अन्ततोगत्वा अँगरेजी राज्य को उखाड फेकने के समर्थक है।

मेडल और खिताब—अँगरेज सरकार अपने समथकों को 'टाइटिल' (उपाधि) देती थी। हरएक उपाधि का अपना अलग-अलग मेडल (पदक) या खिताब होता था।

सत्यानाश फौजदार—सत्यानाश व्यापक चीज़ होने के कारण फौजदार कहा गया है। जिन कारणों से सत्यानाश हुआ वे उसकी फौज है।

धरके हम... खराब—बहु-मतमतान्तर, फूट-कलह, अविद्या, मद्यपान, अतिवृष्टि, अनावृष्टि, दुर्भिक्ष, मँहगी, रोग, फैशन, अपव्यय, सतोष, छूआछूत आदि सत्यानाश के कारण ही उसके विविध रूप है।

फैलाए धर्म—भारत में अनेक धार्मिक मतमतान्तर होने के कारण ऐक्य और संगठन में बाधा पडती थी।

छूआछूत का कर्म्म—छूआछूत से भारतवासियो मे ऊँच-नीच की भेद-भावना और मिलकर काम न करने की प्रवृत्ति पैदा हुई।

हलाकू—विध्वंस और क्रूरता का प्रतीक। चगेज खाँ के उत्तराधिकारियों में से एक। १२५८ ई० मे उसने कला और ज्ञान के केन्द्र बगदाद को नष्ट कर डाला था।

चंगेजी—विध्वंस और क्रूरता का प्रतीक। ससार का प्रसिद्ध सैनिक नेता चगेज खाँ मंगोल। वह मुसलमान नही था। ११५५ ई० मे उसका जन्म मगोलिया मे हुआ था। १२१९ में उसने मध्य एशिया का विध्वंस किया। बुखारा, समरकन्द, हिरात, बलख आदि नगर धूल मे मिला दिए थे। १२२७ मे उसकी मृत्यु हुई।

तैमूर—अपने को चगेज खाँ का वशज बतानेवाला तैमूरलग। उसका

१३३६ ई० मे जन्म हुआ। १३६९ मे उसने चगेज खॉ का अनुकरण कर अनेक नगरों को उजाड दिया। चौदहवी शताब्दी के लगभग अत मे उसने दिल्ली पर आक्रमण किया और सुलतान शासकों को मार भगाया। थोडे दिन दिल्ली मे रह कर वह वापिस चला गया। किन्तु जिस रास्ते से वह आया और गया उस रास्ते मे विध्वस का राज्य स्थापित कर गया। वह जहॉ गया वही असख्य व्यक्तियों को मरवाया, लूट कराई, और आग लगवाई। दिल्ली मे नरमुण्ड ही नरमुण्ड दिखाई पडते थे। उसकी मृत्यु १४०५ ई० मे हुई।

दुरानी अहमद—विध्वस और क्रूरता का प्रतीक। अहमदशाह दुर्रानी। १७६१ मे वह अफ़गानिस्तान मे शासन करता था और उसी वर्ष उसने पानीपत के मैदान मे मराठों को पराजित किया। पानीपत के इस युद्ध में अनेक प्रसिद्ध मराठे वीर काम आए और कुछ समय के लिए उनका साम्राज्य-स्वप्न तिरोहित हो गया।

नादिरसाह—तहमास्प कुली (१६८८–१७४७), प्रसिद्ध ईरानी सैनिक नेता जिसने काबुल और कधार पर विजय प्राप्त कर १७३९ मे दिल्ली पर आक्रमण किया। वह भारतवर्ष से अतुलित धन और तख्त ताऊस ले गया था। रास्ते मे उसने हर जगह खूब लूट मार की और असंख्य व्यक्तियों का वध कराया। सर्वनाश का प्रतीक।

तुच्छ सिपाह—सिपाह = सिपाही। इन आक्रमणकारियों के कारण जो सर्वनाश हुआ था वह थोडे-से भूमिभाग तक सीमित था और अल्प-कालीन था। जिस समय 'भारतदुर्दशा' की रचना हुई उस समय समस्त भारतवर्ष विनाश के गर्त में गिर चुका था और उसका प्रभाव भी शीघ्र ही मिटनेवाला न था।

कल बल छल—युक्ति से, बलपूर्वक और छल से। हर प्रकार के साधनों का प्रयोग कर।

'इन्द्रजीत...करि राखा'—इन्द्रजीत रावण का पुत्र था जिसे मेघनाद भी कहते है।

पुरानन—पुराण नाम के ग्रन्थ बहुत हैं। पुराणों और उपपुराणों की संख्या सौ से ऊपर होगी। किन्तु निम्नलिखित अठारह पुराण प्रामाणिक माने जाते है :—

१. ब्राह्म, २ पाद्म, ३. वैष्णव, ४ शैव या वायवीय, ५. भागवत, ६ नारदीय, ७ मार्कण्डेय, ८. आग्नेय, ९ भविष्य, १०. ब्रह्मवैवर्त, ११. लैंग, १२. वाराह, १३. स्कान्द, १४. वामन, १५. कौर्म, १६ मात्स्य, १७ गारुड़ और १८. ब्रह्माण्ड ।

उपपुराणों की संख्या वैसे तो १८ ही मानी जाती है, किन्तु वास्तव मे उनकी सख्या और भी अधिक है।

रचि बहु . . .घुसाए––अनेक प्रकार की परस्पर विरोधी बाते जिनसे साधारण जन भ्रम मे पड़ जाते हैं।

शैव––शिवोपासक। धार्मिक सप्रदाय ।

शाक्त––शक्ति का उपासक, तत्र-पद्धति से देवी या शक्ति की पूजा करने वाला धार्मिक सप्रदाय।

वैष्णव––विष्णु की उपासना करने वाला। एक विशेष धार्मिक सप्रदाय जिसके अनुयायी विष्णु की उपासना करते और विशेष आचार-विचार से रहते है ।

जाति अनेकन. . .ऊँच बनायो––केवल ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य और शूद्र ये चार प्रधान वर्ण ही नही वरन् इनके भी असख्य भेद-उपभेद हैं और जिनमे पारस्परिक खान-पान, विवाह आदि सबधी अनेक प्रतिबध हैं। इस वर्णभेद ने समाज मे छूत-अछूत, ऊँच-नीच की भावना उत्पन्न की ।

बरजि––रोक कर, निषेध कर।

जन्म पत्र बिधि––विवाह से पूर्व वर तथा कन्या की जन्म-पत्रियों को मिलाना।

बीरज––वीर्य, शक्ति।

विभिचार––व्यभिचार।

कूपमंडूक––कुएँ का मेढक, जिसका दृष्टिकोण और जानकारी सीमित हो।

औरन कौ. . .घटायो––ससार के और लोगो से, खान-पान और छुआछूत सबधी प्रतिबधो का कारण, सपर्क छुटा कर अपना अनुभव और उपयोग घटाया अर्थात् पिछड गए।

बहु देवी देवता. . .हिंदू घबराई––अनेक देवी-देवताओं, भूत-प्रेत आदि की पूजा मे लिप्त रहने के कारण हिन्दू लोग ईश्वर के, धर्म के वास्तविक रूप को भूल कर भ्रमित रहते हैं।

अपरस—न स्पर्श करने योग्य, स्पर्श न किया गया।

सोल्हा छूत—रेशमी वस्त्र। 'सोल्हा छूत' का अर्थ सोलह छूत अर्थात् अनेक प्रकार के छूआछूत भी लिया जा सकता है।

तीन तेरह—तितर-बितर अर्थात् सामाजिक ऐक्य और सगठन का अभाव।

रचि कै मत...हाथ अरु पाय—वेदात के 'अह ब्रह्मास्मि' के नाते सभी ब्रह्म-स्वरूप होकर पगु हो गए अर्थात् अपना-अपना कर्त्तव्य भूल गए, नियमादि के पालन की चिता न रही, एक-दूसरे के प्रति प्रेम-भाव न रह गया। परब्रह्म बिना हाथो के काम करता है, बिना पैरो के चलता है, बिना आँखो के देखता है, इस दृष्टि से 'तोरि हाथ अरु पाय' कहा गया है।

वेदांत—छः दर्शनो मे से प्रधान दर्शन जिसमे चैतन्य या ब्रह्म ही को एक-मात्र पारमार्थिक सत्ता स्वीकार किया गया है।

इतिकर्त्तव्यता—कर्त्तव्य, नियम।

रुक्ष—आत्मज्ञानी विविध रूपात्मक जगत् को, अपने-पराए को, विरह-सयोग को, सुख-दु:ख को सब को भ्रम मानता हुआ अपनी अभावुकता, रसहीनता प्रकट करता है।

जब स्नेह...प्रयत्न कहाँ—जब आपस मे एक दूसरे के प्रति प्रेम नही है सहानुभूति नही है, अर्थात् जब अपने चारो ओर रहनेवाले लोगो की दुर्दशा देखकर हृदय नही पसीजता तो उनके उद्धार की बात कैसे पैदा हो सकती है। देश व्यक्तियों से ही बनता है।

राज न...पेनशन ही सही—सक्रियता और प्रगति का अभाव। प्राचीन वैभव पर जीवित रहना।

रोजगार न... सूद ही सही—पुरानी (सास्कृतिक) पूँजी पर निर्भर रहना।

वह भी नहीं...का सही—अपनी (सास्कृतिक) सपत्ति को नष्ट कर डालना।

व्यापार को...मार गिराया—अँगरेजी राज्य मे भारतवर्ष का वाणिज्य-व्यवसाय नष्ट हो चुका था। यूरोपीय जातियाँ व्यापारिक उन्नति और धनोपार्जन के लिए अनेक कष्ट सहती और दूर-दूर देशो मे जाती थी। भारतवासी इस प्रकार का कष्ट न उठाकर जो कुछ मिल जाता था उसी मे सतोष कर लेते थे। इसी-लिए अगरेज़ी राज्य मे भारतवासियों की औसत आय बहुत कम हो गई थी।

हाथ साफ किए——प्राप्त की। अदालतो के कारण काफी धन खर्च होता था और देश की जनता को और भी आर्थिक कष्ट पहुँचता था।

बिल और टोटल——बिल=खरीदी हुई वस्तु के मूल्य का पुर्जा। टोटल=जोड। फैशन के कारण बने हुए बिल और बिलो के रुपयों का जोड़। फैशन के कारण अपव्यय।

गोले——बिलों के गोले अर्थात् अत्यधिक अपव्यय।

अंटाधार——चौपट।

तुहफे——भेट, उपहार।

चंदे——सरकार को दिए गए चदे।

'बम बोल... दिसा'——बम=लोहे का विस्फोटक गोला। तुहफे, घूस, और चन्दे दे-देकर धन आदि समाप्त हो गया, कुछ न रह गया।

'मोटा भाई...मूड़ लिया'——बडा भाई या अमीर कह-कह कर सब कुछ ठग लिया।

पँड़िया के ताऊ——भैसा, अर्थात् बुद्धू।

चुटकी बजी——इशारा हुआ, अर्थात् इशारे पर तरह-तरह के नाच नचाए।

बराबरी का झगड़ा उठा——ऊँचे-नीचे दर्जे का झगडा।

धायँ धायँ गिनी गई——सलामी मिली।

वर्णमाला कंठ कराई——सी० आई० ई० आदि उपाधियाँ मिली।

हाथी के खाए कैथ हो गए——खोखले हो गए।

धन की सेना... शरण मिली——धन प्राप्त करने के जितने भी साधन थे, सब नष्ट हो गए, उनका कोई चिह्न तक बाकी न रहा और देश का धन देश मे न रह कर इँगलैण्ड जाने लगा। अगरेजों की आर्थिक नीति, कर, अगरेज कर्मचारियो के वेतन, युद्ध-कर आदि के कारण देश का धन देश मे न रह कर विदेश जाने लगा था।

अश्रुमार्जन——आँसू गिराना।

पंचामृत——एक प्रकार का द्रव्य जो दूध, दही, घी, चीनी और मधु मिलाकर बनाया जाता है, अर्थात् फूट, डाह आदि को शत्रु की फौज में ऐसा घुलामिला दिया कि वे अलग मालूम न पडे।

घंटा पर के गरुड़—झूठे गरुड, अर्थात् गतिहीन, जो कुछ न कर सके। शत्रु को बिना आक्रमण किए गतिहीन और पगु कर दिया।

काई की तरह फाड़ा—तितर-बितर कर दिया।

योजन—दूरी जो विभिन्न मतानुसार दो, चार और आठ कोस की मानी जाती है।

शस्य—खेती, अन्न।

लाही—लाख से मिलता-जुलता एक कीड़ा जो प्राय फसल को हानि पहुँचाता है।

नील ने भी नील बन कर—भारतेन्दु का सकेत नील की खेती की ओर है। पहले 'नील' शब्द का अर्थ है एक पौधा जिससे नीला रग निकाला जाता है। इसकी खेती पूर्वी उत्तर-प्रदेश और बिहार मे बहुत होती थी। 'नील बनकर' अर्थात् कलक का टीका बनकर। नील की खती के आधार पर अगरेजो ने भारतवासियों का खूब आर्थिक शोषण किया और तरह-तरह के अत्याचार किए।

लंकादहन—घर का नष्ट होना। कहते है लंका सोने की बनी थी। भारत भी सोने की चिडिया के नाम से प्रसिद्ध था। जिस प्रकार लका का दहन एक बाहर से गए वानर ने किया था, उसी प्रकार बाहर से आई हुई अगरेज जाति ने भारत को उजाड डाला।

बाकी साकी—बाकी—शेष। 'साकी' निरर्थक शब्द जुडा हुआ है, जैसे, 'पानी-वानी'।

सपराए डालता हूँ—पूर्ण किए देता हूँ।

महर्घ—महार्घ, महँगी।

धन, बल और विद्या—भारतीय अराजकतापूर्ण परिस्थिति और अंगरेजों की पूँजीवादी-साम्राज्यवादी नीति के कारण भारत का धन नष्ट हुआ, दासत्व के कारण देश की अपनी कोई सैन्य-शक्ति न रह गई, और देश की शिक्षा-पद्धति टूट जाने से अविद्या का प्रचार हुआ। अगरेज़ों द्वारा प्रचलित नवीन शिक्षा केवल शासन-सबधी आवश्यकताओं की पूर्ति मात्र के लिए थी और वह समाज बहुत थोडे व्यक्तियों तक सीमित था।

चौथा अंक

आन—दुहाई, मर्यादा, आतक।

मेरी ही... भगवान—टट्टी=आड़। मेरे ही बहाने भगवान् लोगों के प्राण हरते है।

मृत्यु कलंक—मेरा बहाना हो जाने के कारण मृत्यु कलक के टीके से बच जाती है।

अत्तार—अर्क वगैरह खीचने वाला, देशी दवाइयाँ बेचने वाला। रोग के कारण ही वैद्य और अत्तार का पालन-पोषण होता है, जीविका-निर्वाह होता है।

कुपथ्य—जो खाने योग्य न हो।

पथ्य—हल्का और शीघ्र पचनेवाला खाना जो रोगी के लिए लाभदायक हो।

नजर—बुरी निगाह का प्रभाव पडना।

श्राप—शाप, कोसना, अहित-कामना।

टोना—जादू, मत्र।

टनमन—तत्र-मत्र, टोना।

देवी-देवता—देवी-देवता का सिर चढना।

ओझा—भूत पुजानेवाला, झाड-फूँक करने वाला।

दरसनिए—वे लोग जो शीतला आदि की शाति की पूजा कराते है।

सयाने—भूत-प्रेत आदि उतारने वाला।

पंडित—ग्रह आदि बतानेवाला।

सिद्ध—जिसने योग या तप द्वारा अलौकिक लाभ या सिद्धि प्राप्त की हो, योग की विभूतियाँ दिखानेवाला। यहाँ पर 'सिद्ध' से उस व्यक्ति का तात्पर्य है जो इस प्रकार की झूठी शक्ति के आधार पर लोगों को चमत्कार दिखाते फिरते है।

'जस जस सुरसा.... रूप दिखावा'—तुलसी कृत रामायण के सुन्दर काण्ड

से। सुरसा एक प्रसिद्ध नागमाता का नाम है जिसने हनुमान जी को समुद्र पार करने के समय रोका था।

सड़क चौड़ी होना——आरोग्य की दृष्टि से लाभदायक होती है।

'जस-जस... दिखावा'——तुलसी की पंक्तिया। समुद्र पार करते समय सुरसा राक्षसी हनुमानजी को निगल जाने के लिए जितना मुँह फैलाती थी, उतना ही हनुमान जी अपना शरीर बढ़ा लेते थे। यहाँ तात्पर्य है कि चुँगी की ओर से जितना अधिक प्रयत्न लोगों के स्वास्थ्य के लिए होगा उतना ही हम उग्र रूप धारण कर लेगे।

धन्वंतरि——देवताओ के वैद्य जो पुराणानुसार समुद्र-मन्थन के समय और सब वस्तुओ के साथ निकले थे। वे आयुर्वेद के सब से प्रधान आचार्य और सब से बड़े चिकित्सक मान जाते है।

काशिराज दिवोदास——चन्द्रवशी राजा भीमरथ के एक पुत्र जो काशी के राजा थे और धन्वन्तरि के अवतार माने जाते है।

सुश्रुत——आयुर्वेदीय चिकित्सा-शास्त्र (शल्य क्रिया) के एक प्रधान आचार्य जिनका रचा हुआ 'सुश्रुत-सहिता' ग्रन्थ बहुत मान्य है।

वाग्भट्ट——'अष्टागहृदयसहिता' नामक वैद्यक ग्रन्थ और वैद्यक निघंटु के रचयिता।

चरक——वैद्यक के प्रधान आचार्य। ईसवी शताब्दी के प्रारभ मे उनका आविर्भाव-काल माना जाता है। कहा जाता है वे कनिष्क के यहाँ राजवैद्य थे।

बैदगी——वैद्यकी।

जीविका के हेतु बची है——वैद्य लोग अपनी विद्या से केवल पेट पालते है; उनकी दवाओं मे असर नही रह गया।

विस्फोटक——फूट पडनेवाला रोग, फुड़िया-फुंसी।

डेगू——एक प्रकार का ज्वर।

अपाप्लेक्सी——लकवा।

आछत——रहते हुए।

टिकस——टैक्स, कर।

पान का बीड़ा––जो व्यक्ति किसी काम के करने का दृढ़ सकल्प कर लेता था या भार लेता था वह पान का बीडा उठाता था।

पोस्ती––अफीमची।

पोस्त––अफीम के पौधे का डोंडा।

पोस्ती ने... कोस––एक अफीमची अफीम का डोडा पीकर नौ दिन मे केवल ढाई कोस चला। आलस्य का प्रतीक।

डाक का हरकारा––राज्य की ओर से चिट्ठी-पत्री ले जाने वाला। जब आधुनिक डाक्-व्यवस्था नही थी, उस समय हरकारे तेज़ी के साथ पैदल दौड-दौड कर डाक ले जाते थे। पोस्ती का नौ दिन मे अढ़ाई कोस चल लेना भी बहुत है।

कूड़ी के... पार––जब अफीम पी तो या तो कूँडी (पत्थर का प्याला) के इधर ही बैठे रहे, बहुत चले तो उसकी दूसरी ओर पहुँच गए। आलस्य का प्रतीक।

बारी––बगीचा।

हालमस्त––जिस हालत मे हो उसी से सतुष्ट।

आलसी पड़े... चैन है––अर्थात् आलस्य के कारण कुएँ मे से निकलना भी नही चाहता। उसी पतित हालत मे सन्तुष्ट है।

ग़जल––फारसी और उर्दू मे एक प्रकार की कविता।

मिस्ले––समान।

लोथ––निर्जीव, मुर्दा।

नक्शेपा––पदचिह्न।

उठकर... नही अच्छा––माशूक के घर तक जाना पड़ेगा, इसलिए दिल लगाना ठीक नही।

उमरा––रईस।

फाकों––उपवास, कुछ न खाना।

सिजदे––दडवत। सिजदा करने मे शरीर तो हिलाना ही पड़ता है।

बिहिश्त––स्वर्ग।

दोज़ख़––नरक।

काहिल—सुस्त, आलसी।

मीरेफर्श—फर्श का सरदार अर्थात् जिसे जमीन पर पडे रहने मे ही आनद आवे।

काजी—मुसलमान धर्म के अनुसार न्याय करने वाला।

काजीजी . . . अंदेश से—बेमतलब दुनिया भर की चिता मे घुलना।

अंदेशा—चिता, फिक्र, डर।

'कोउ नृप . . . रानी'—तुलसी की पक्तियाँ है। कैकेयी को उभाडते समय मंथरा की उक्ति। अपनी परिस्थिति से सतोष, और दुनिया की बातो से कोई सबध न रखना।

'अजगर . . . राम'—बाबा मलूकदास कृत। कवि का तात्पर्य राम की कृपा से है, किन्तु आलसी लोग इसे अपने ऊपर घटित करते है।

दंत कटाकट—दाँत बजाना, रटना।

'जो पढ़तव्यं. . . कर्त्तव्यं'—पढ़नेवाला भी मरता है, जो नही पढता वह भी मरता है। तब फिर दाँत बजाने से क्या लाभ, अर्थात् परिश्रम करना व्यर्थ है। लोक-प्रचलित उक्ति है।

जात मे ब्राह्मण—सब जातियो मे ब्राह्मण जाति अच्छी जिसे कुछ नही करना पडता। घर बैठे लोग सीधा दे जाते है।

बैरागी—विरागी, वैष्णव मत के साधुओं का एक भेद जो बिना किसी परिश्रम के उदरपूर्ति कर लेता है।

रोजगार मे सूद—सूद का रुपया अपने आप चला आता है, परिश्रम नही करना पड़ता। सूदखोर घर बैठे सूद खाते है।

दिल्लगी मे गप—दिल्लगी के लिए तब भी दिमागी परिश्रम और दूसरे व्यक्ति की अपेक्षा रहती है, गप के लिए ऐसी कोई आवश्यकता नही होती। किसी से लेना न देना, बस एक जगह बैठे बाते बनाना। काहिली की निशानी।

तान मारना—निश्चिन्त रहकर मन की मौज मे बहना।

सुरखाब का पर—सुरखाब एक पक्षी है जिसे चकवा भी कहते है। विलक्षणता या विशेषता या अनोखापन का द्योतक।

'तवंगरी बदिलस्त न बमाल'—(फारसी) अमीरी हृदय में है, धन मे नही।

मालमस्त—धन से सन्तुष्ट।

हालमस्त—अपनी परिस्थिति से सन्तुष्ट।

जोगनिद्रा—योगाभ्यास करते हुए सो जाना, समाधि। यहाँ आलस्य की भेजी जोगनिद्रा सबको अभिभूत करे, अर्थात् सब लोग गफ़लत की नीद मे पड़े रहे।

बप्पा—बाप।

'सरबस खाइ . . . प्राना'—सब कुछ खाकर तथा नाना भोग भोगने के बाद समरभूमि मे प्राण प्रिय हो गए, अर्थात् लोग कृतघ्न कहेगे।

भगवान् सोम—चन्द्रमा। वेदो मे सोम-पान का उल्लेख है।

वेद—चार वेद है—ऋग्वेद, यजुर्वेद, सामवेद और अथर्ववेद। भारतीय आर्यो के सर्वमान्य और सर्वप्रधान ग्रन्थ।

श्रौत्रामणि यज्ञ—वेदविहित एक यज्ञ विशेष। इस यज्ञ का वर्णन शुक्ल यजुर्वेद संहिता के १९ वे अध्याय मे है। इस अध्याय मे सर्वत्र सोम और सोमपान की चर्चा है।

स्मृति—हिन्दुओं के धर्मशास्त्र जिनमे धर्म, दर्शन, आचार-व्यवहार, शासन-नीति आदि के विवेचन है, जैसे मनुस्मृति, याज्ञवल्क्य स्मृति आदि।

तंत्र—उपासना-संबधी एक शास्त्र जो शिव-प्रणीत माना जाता है और गुप्त रखा जाता है।

बीराचमन—अग्नि-पूजको की पवित्र शराब।

शराबुन् तहूरा—मुसलमानी धर्म के अनुसार पवित्र शराब जो स्वर्ग में मिलती है।

बापटैजिग वाइन—बपतिस्मा अर्थात् किसी व्यक्ति को ईसाई बनाने के मुख्य सस्कार, के समय ईसाई सप्रदाय द्वारा प्रयुक्त शराब।

सरकार—अगरेजी सरकार के राज्य मे।

ब्राह्मण, क्षत्री वैश्य—अर्थात् हिन्दुओ के उच्च वर्ण।

सैयद—मुसलमानो के चार वर्गो मे से एक। मुहम्मद साहब के नाती हुसैन के वश का आदमी। शब्दार्थ है 'बडा'।

सेख—मुसलमानो के चार वर्गो मे से पहला। इस्लाम धर्म का आचार्य। मुहम्मद साहब के वशजो की उपाधि।

पठान—एक मुसलमान जाति जो अफगानिस्तान की रहनेवाली थी, और जो भारत आकर पठान कहलाई। यह जाति अब पाकिस्तान के सीमान्त प्रदेश मे रहती है। १६वी शती मे बाबर को इस जाति का मुकाबला करना पडा था।

भट्ट के ठट्ट—भट्ट=ब्राह्मणो की एक उपाधि। भट्टो का समूह।

गुजरातिन—गुजराती, जिनमे वैष्णवो की सख्या अधिक है।

गौतम—गौतम ऋषि के वशज, ब्राह्मणो की एक उपाधि।

अग्र के नंद—अग्रवाल।

लोट—नोट।

टोटल—(बिल का) जोड़।

विधि—ब्रह्मा।

वारुणी—मदिरा।

पोर्ट—गहरी लाल पुर्तगाली शराब।

विष्णु . . . बिचारि—शराबियो मे प्राय. यह उक्ति सुनी जाती है। वारुणी विष्णु, पोर्ट पुरुषोत्तम, मद्य मुरारि, शैम्पेन शिव, गौड़ी गिरीश और ब्राडी ब्रह्मा के समान है।

शांपिन—शैम्पेन (फ्रासीसी शराब)

गोड़ो—एक प्रकार की गुड से बनी मदिरा।

ब्रांडी—ब्रैडी।

उमगावन—उमग पैदा करना।

हरि. . .लखात—जो बिना तप के ईश्वर से नाता जोडती है, अर्थात् मद्यप थोडी देर के लिए ससार को भूल कर तरगायित हो उठना है।

तो सबसो. . .कर बैठाय—ताकि सरकार को अधिक से अधिक आमदनी होती।

निसानी—चिह्न।

थिर—स्थिर।

मनु—ब्रह्मा के चौदह पुत्र जो मनुष्यो के मूल पुरुष माने जाते है·— स्वायम्, स्वारोचिष, उत्तम, तामस, रैवत्, चाक्षुष, वैवस्वत, सार्वणि, दक्ष सार्वणि, ब्रह्म सार्वणि, धर्मसार्वणि, रुद्र सार्वणि, देव सार्वणि और इन्द्र सार्वणि। चाक्षुष तक मनु हो चुके। वैवस्वत आजकल है। शेष होने को है।

'प्रवृत्तिरेषा भूतानां—प्राणियो की यही प्रवृत्ति होती है।

भागवत—अठारह पुराणो मे से एक, और वैष्णवो का प्रिय ग्रन्थ जिसमे १२ स्कध, ३१२ अध्याय और १८००० श्लोक है। वह वेदान्त का तिलक-स्वरूप माना जाता है।

'लोके व्यवायामिषमद्यसेवा नित्यास्ति जंतो':—ससार मे जीव मैथुन, आमिषाहार, मद्य-सेवा नित्यप्रति करते है।

वर्तमान सभ्यता. . .मूलसूत्र हूँ—वर्तमान सभ्यता मुझ पर ही आधारित है। अत्यधिक प्रचार।

पंच विषयेंद्रि य—पदार्थो के रूप, रस, गध आदि के अनुभव मे सहायक पाँच इन्द्रियाँ—चक्षु, श्रोत्र, रसना, नासिका और त्वचा।

संगीत-साहित्य—मदिरा की तरग मे सब कुछ भूल कर, संगीत-साहित्य की रचना पूर्ण रूप से उनमे लीन होकर की जाती है। कहा जाता है मदिरा-पान कर कल्पना और भी तीव्र हो जाती है।

मदवा—मद्य।

हिन्दुओं से समझो तो—हिन्दुओ के साथ निपटारा करो तो। अर्थात् हिन्दुओ से लग कर उन पर अपना जाल फैलाओ।

स्खलित नृत्य—लडखडाते हुए, गिरते हुए नृत्य।

महामोह—महा अज्ञान्।

थाप—बाजे पर पूरे पजे का आघात अर्थात् पूरी छाप।

तमोगुण—प्रकृति के तीन भावो (सत्व, रज और तम) मे से एक जो भारी और रुकने वाला तथा निकृष्ट माना गया है। इसी के कारण निकृष्ट कर्म होते है।

उलूक—उल्लू।

शोकितों—क्षुब्ध व्यक्ति।

चारों नेत्र—दो चर्म चक्षु और दो हृदय चक्षु।

आध्यात्मिक—आत्मा-सबधी।

आधिभौतिक—शरीर-संबधी।

विलायत...द्वापर है—चार युग—सत युग, त्रेता, द्वापर और कलि। धर्म के चार चरण माने जाते है—सतयुग मे चारो रहते है, त्रेता मे तीन, द्वापर मे दो और कलियुग मे केवल एक ही रह जाता है। इसलिए विलायत मे अभी धर्म का प्राबल्य है, वहाँ हमारी दाल नही गलेगी।

गैस और मैगनीशिया—वैज्ञानिक युग के प्रतीक। गैस और मैगनीशिया दोनो प्रकाश करने के काम आते है अर्थात् जहाँ ज्ञान का प्रकाश है वहाँ अज्ञान रूपी अधकार का क्या काम।

'बहुत ...झाइ ... जानत अहऊँ'—तुम स्वय चतुर हो, तुम्हे और क्या समझाऊँ।

बैतालिक—वह स्तुति-पाठ करने वाला जो राजाओ को स्तुति करके जगाता था। भारतदुर्दैव की यहाँ स्तुति की गई है।

पटाक्षेप—पर्दे का गिरना।

निह्चै—निश्चय।

धूर—धूल अर्थात् अब वे मिट्टी मे मिल जायँगे।

धर्म्म—धर्मराज युधिष्ठिर।

शाक्यसिंह—शाक्यजाति का सिह अर्थात् गौतम बुद्ध।

व्यास—पराशर तथा सत्यवती के पुत्र कृष्ण द्वैपायन जिन्होंने वेदों के ऋक्, यजु और साम तीन विभेद और उनका सपादन किया। कहा जाता है कि अठारहो पुराण, महाभारत, भागवत ओर वेदात आदि की रचना भी इन्होने की थी। इन्ही के पुत्र शुकदेवजी हुए।

सेवाजी—शिवाजी, जिन्होंने सत्रहवी शताब्दी मे औरंगजेब से मुठभेड़ लेते हुए वीरता का प्रदर्शन किया।

रनजीतसिंह—रणजीतसिह जिनकी मृत्यु १८३९ मे हुई। वे अत्यन्त वीर सिक्ख-नरेश थे जिन्होंने कश्मीर तथा अफगानिस्तान तक धावा मारा। अगरेज उनसे भयभीत रहते थे।

उदैपुर ... पन्ना आदिक—जहाँ अनेकानेक वीर हुए।

कूढ़—अज्ञानी, बेवकूफ।

'अँगरेजहु को . . . है मूड़'—प्रत्यक्षत सुख-शाति और ज्ञान-विज्ञान का प्रचार अगरेजी राज्य मे हुआ। तब भी हिन्दुओ ने उन्नति न की।

स्वारथ पर—अपने स्वार्थ मे मग्न।

विभिन्न मतवाले—विचारो की दृष्टि से अनैक्य।

बाजी—बाजी, होड लगा-लगाकर।

बिगत उछाह—उत्साहहीन।

नरनाह—राजा।

एकता बुद्धि कला—ऐक्य, ज्ञान और कला का अभाव भारतेन्दु को बहुत खटकता था।

बोझ—कर आदि का बोझ।

पैर छानि के निज-सुख—अपने सुख मे पैर छान कर अर्थात् अपने सुख मे लीन होकर (भारतवासियों पर कर आदि बोझ लाद कर अत्याचार भी करो, किन्तु भारतवासी कुछ नही बोलते)।

रासभ—गदहा, खच्चर।

छमा-अगार—क्षमा के अगार, घर। क्षमाशील।

जवनिका—नाटक का पर्दा जो अभिनय के अंत मे गिराया जाता है।

पांचवां अंक

बंगाली—ऐतिहासिक कारणो से बगाली शिक्षा और सार्वजनिक क्षेत्र मे अग्रगण्य थे। भारतेन्दु बगालियो के सपर्क मे आ चुके थे और उनके स्वभाव से अच्छी तरह अवगत थे।

महाराष्ट्र—उपर्युक्त कारण से ही महाराष्ट्र का उल्लेख हुआ है। मराठो की राजनीतिक शक्ति का पतन हुए भी अभी बहुत दिन न हुए थे।

एडिटर—सपादक। सपादक तत्कालीन शिक्षित वर्ग के सदस्य सार्वजनिक जीवन के प्रधान अग थे। भारतेन्दु स्वय सपादक होने के कारण उनकी प्रवृत्ति से भली भाँति परिचित थे।

कवि—भारतेन्दु स्वय कवि थे। यहाँ उस कवि से तात्पर्य है जो देश की दीनहीन दशा पर दृष्टिपात न कर रीतिकालीन परपरा के मोह मे ग्रस्त था।

देशी महाशय—भारतेन्दु व्यक्तिगत जीवन के अनुभव से देशी लोगो की प्रवृत्तियो से भी परिचित थे। देशी लोगो के दोषो का वर्णन करने के साथ-साथ उनकी दूरदर्शिता का उल्लेख भारतेन्दु ने किया है। और लोग जब व्यर्थ की बाते करते है तो प० देशी मूल बात कहता है—विद्या और कला की उन्नति।

परिहार—दोष आदि का निवारण या निराकरण, दोषादि के दूर करने की युक्ति या उपाय।

बीर्जोबल—वीर्य और बल।

जो शब ... होगा—भारत की उन्नति के लिए मतैक्य सब से पहली आवश्यकता थी। भारतेन्दु इस बात पर बहुत जोर देते थे।

ब्रिटिश इंडियन असोसिएशन—वैज्ञानिक ज्ञान तथा साधनो के प्रचार तथा समस्त देश मे राजनीतिक सस्थाओ की स्थापना से भारतवासियों मे राजनीतिक चेतना का प्रादुर्भाव हुआ जिसका प्रकटीकरण पहले-पहले बगाल के ब्रिटिश इडियन ऐसोसिएशन के माध्यम द्वारा हुआ। इस संस्था के सदस्य अधिकतर उच्च शिक्षित वर्ग के थे। उस समय यही सभव भी था।

शोनता—सुनता।

हुआँ—वहाँ ।

हेंयाँ—यहाँ ।

अलबत्त—निस्सदेह, बेशक ।

उपवेशन—बैठना ।

यहीं मगर . . . कुछ नही—पढे-लिखे केवल बाते बनाने, लबी-चौडी आयोजनाएँ बनाने मे ही प्रवीण थे। व्यावहारिक रूप मे कुछ न कर पाते थे। सरकार से डरते थे।

क्यों भाई . . . कर देंगे—दूसरा देशी, देशी अर्थात् हिन्दीभाषियो के दोषो का प्रतिनिधित्व करता है। प्रस्तुत कथन से उसकी पद-लोलुपता प्रकट होती है।

मुहम्मदशाह—मुगल-सम्राट्। सिहासन—१७१९, मृ० १७४८। १८ वी शताब्दी मे दो ही मुगल सम्राटो ने दीर्घकाल तक राज्य किया—मुहम्मदशाह और शाह आलम द्वितीय (१७५९–१८०६)। मुहम्मदशाह के समय मे साम्राज्य मे पूर्ण अराजकता फैली। वह स्वय विषय-भोग, आमोद-प्रमोद मे इतना लिप्त रहता था कि मुहम्मदशाह रगीले के नाम से प्रसिद्ध हुआ।

भाँड़—मसखरा, एक प्रकार के पेशेवर जो महफिलो आदि मे जाकर नाचते-गाते और हास्यपूर्ण नकले उतारते है।

कनात—मोटे कपडे की वह दीवार जिससे किसी स्थान को घेर कर आड़ करते है।

मुए—स्त्रियों, विशेषत: मुसलमान स्त्रियो, द्वारा दी गई गाली। मरा हुआ।

मुहम्मद शाह . . . किया जाय—इन पक्तियो से तत्कालीन कवियो की प्रवृत्ति पर अच्छा प्रकाश पडता है। वीर-रस से विमुख और केवल शृंगार का ही निरूपण करनेवाले कवियो से और आशा ही क्या की जा सकती थी।

एडूकेशन—शिक्षा।

एडूकेशन को . . . क्या कहते है—शिक्षा, ज्ञान-विज्ञान का प्रचार किया जाय, नई-नई सस्थाओ, समाचारपत्रो और भाषाओ द्वारा लोगो मे चेतना उत्पन्न की जाय।

उत्सन्न—खोद डालना।

हमलोग. . .अपना बचाव करता—नवीन शिक्षा, वैज्ञानिक आविष्कारो आदि

से राजनीतिक चेतना और सामाजिक तथा धार्मिक सुधारवादी आदोलनो का जन्म हुआ। राजनीति के क्षेत्र मे भी भारतीय आन्दोलन कुछ सुधारों तथा माँगो तक ही सीमित था। जो कुछ 'विरोध' था। भी वह ब्रिटिश पार्लमेंट के 'हिज मैजेस्टीज औपोजीशन' के रूप मे था। भारतवासी इगलैण्ड से सबध-विच्छेद करना नही चाहते थे। वे चाहते थे कि इंगलैण्ड भारत मे अपने नैतिक मिशन को अच्छी तरह समझ कर उसे व्यावहारिक रूप दे। वे ब्रिटिश नागरिको के समान अधिकार चाहते थे। अँगरेजी राज्य एक तरह से उन्होने अपना लिया था। किन्तु तब भी अँगरेजो को भारतवासियो की आकाक्षाएँ ओर नए ज्ञान के प्रकाश मे अपने जीवन को सुधारने की भावना अच्छी नही लगती थी और उन्हे वे सन्देह की दृष्टि से देखते थे।

झाड़बाजी—फटकार पडे (अँगरेज सरकार द्वारा)।

बनात—एक प्रकार का बढ़िया ऊनी कपडा।

गजी—एक प्रकार का मोटा देशी कपड़ा।

पाँच जन बंगाली—शिक्षित, चेतना-प्राप्त बगाली।

पिशान—आटा।

स्वेज का नहर—१८६९ में स्वेज के खुल जाने से न केवल इँगलेंड ओर भारत के बीच का फासला ही कम हुआ और नए-नए विचारों का देश मे प्रचार ही हुआ, भारत मे अँगरेजो के साम्राज्यवादी और ओपनिवेशिक दृष्टिकोण को भी बल मिला। स्वेज के खुल जाने से इंगलैंड से नीति निर्धारित की जाने लगी। अँगरेज भारत को घर न बना कर तुरत इँगलैड वापिस जाने लगे—आदि।

पिवरी—एक यत्र जिससे जल निकाला जाता है।

हाय! यह कोई ...हो जायगा—भारतेन्दु विद्या और कला की उन्नति को बहुत महत्व देते थे। बिना इसके समाचारपत्रो मे छपे लबे-लबे लेखो का भी कोई महत्व नही था—उन्हे समझता कौन।

आर्टिकिल—लेख।

छींक हुई थी—अपशकुन हुआ था। अंध-विश्वास का द्योतक है।

डिसलायलटी——(अंगरेजी राज्य के प्रति) भक्ति का अभाव। पुलिसवेष मे।

हम लोग. . .एकत्र हुए हैं——यही बात थी जो अँगरेजो को अच्छी नही लगती थी और इसे अगरेजी राज्य को उखाड फेकने का प्रयत्न समझकर सदेह की दृष्टि से देखते थे। ज्ञान-विज्ञान का प्रचार, सुधार आदि का मतलब था चेतना का जन्म जो अँगरेजी राज्य के लिए घातक सिद्ध हो सकती थी और हुई भी। अँगरेज चाहते थे कि भारतवासी शासन-कार्य सम्हालने भर के लिए पढे, नही तो वे जहाँ थे वही पडे रहे।

विभीषिका——भयानक काड, डर।

पालिसी——नीति।

'कवि वचन सुधा'——भारतेन्दु द्वारा सपादित पत्र। १८६८ मे उसका प्रकाशित होना प्रारंभ हुआ था। इस पत्र का हिन्दी पत्र-पत्रिकाओं मे महत्वपूर्ण स्थान है। भारतेन्दु के लोकप्रिय व्यक्तित्व की छाप होने के कारण यह पत्र मासिक से पाक्षिक और पाक्षिक से साप्ताहिक हो गया था। १८८० के लगभग 'मर्सिया' शीर्षक एक पच के प्रकाशित होने से वह सरकार का क्रोध-भाजन बन गया, जिसके फलस्वरूप सरकार ने उसे खरीदना बन्द कर दिया। भारतेन्दु को इससे काफी आर्थिक हानि हुई। १८८५ मे 'कविवचनसुधा' का प्रकाशन बन्द हो गया।

ऐक्ट——कानून।

हाकिमेच्छा——शासक की इच्छा। अर्थात् अँगरेजो की नीति और हाकिमो की इच्छानुसार कोई स्वदेश-हित वाला कार्य 'डिसलायल्टी' के रूप मे देखा जा सकता था।

भड़वा तुम कहता है. .अब मरे——भडुआ 'तुम' कहकर अंगरेज शासको की भेजी हुई 'डिसलायल्टी' को सबोधित कर उसका अनादर करना है अब बिना दण्ड पाए न बचेगे।

चेयरमैन——सभापति।

अगुआ——नेता (सभापति महोदय का कायरपन दिखाया है। बातें करने मे ही तेज है)।

———

छठा अंक

बैस—वयस, उम्र।

निसि . . . बीत्यो—न मालूम कितने रात-दिन व्यतीत हो गए, पर तुम अभी तक नही जगे।

काल राति—प्रलय की अधेरी और भयावनी रात्रि अर्थात् घोर अज्ञानाधकार।

बैरि-बस—वैरी के वश मे, अर्थात् जो बाते तुम्हे पतित बनानेवाली है उन्ही के वश मे।

किन—क्यो न।

बड़ाई—बडप्पन, गौरव, महिमा।

मुँह बाई—मुँह फाड़े रह जाओगे, अर्थात् विस्मित या आश्चर्य चकित होकर रह जाओगे।

शिरोमणि—बुद्धि, बल और धन की दृष्टि से सर्वश्रेष्ठ।

रच्छित—भारत के बाहुबल का यश चारो ओर फैला हुआ था। जो भारत के मित्र देश थे वे बिना किसी भय के रहते थे।

सिच्छित—गणित आदि के क्षेत्र मे भारत ने विदेशो को ज्ञान दिया।

भौंह हिलाए—जरा भी क्रुद्ध हो जाने से।

मंगल साथा—मगल-कामना सहित।

किरिन—(ज्ञान की) किरण।

भारत . . . संसारा—भारत के जीते रहने से ससार जीवित रहता था (क्योकि ससार भर के बल और बुद्धि का स्रोत भारतवर्ष ही था)।

फिनिक—फिनिशिया। कार्थेज इसी देश का प्रसिद्ध नगर था।

मिसिर—मिश्र।

सीरीय—सीरिया।

युनाना—यूनान (ये सब प्राचीन देशो के नाम है जो इसवी पूर्व समय मे बहुत बढ़े-चढे थे)।

तकसीर—दोष, कसूर।

बिधि—ब्रह्मा, भाग्य।

बिधना—ब्रह्मा, भाग्य।

रोम—रोम नगर या देश। यूनान की भाँति प्राचीन देश।

बर्बर—पिछडे हुए वाह्य आक्रमणकारी, जैसे गोथ्स, मगोलियन हूण आदि जातियाँ जिन्होने रोम पर आक्रमण किया और उसके प्राचीन वैभव को नष्ट कर दिया। यह ईसा की तीसरी और बाद की शताब्दियो मे हुआ।

कीरति-थंभ—कीर्ति-स्तभ, यश की स्मारक चीजे।

प्रण टेकन—प्रण या प्रतिज्ञा के सहारे अर्थात् पूर्ण करनेवाले।

बरु—चाहे, कुछ हर्ज नही।

मेरे मन अति मानी—मेरे मन को अच्छी लगी।

थाप्यो पग . . . उप्पारे—सिर नगा कर उस पर पैर रखा। पूरी तरह से नीचा दिखाए जाने का भाव है।

घनेरे—अनेक।

काशी, प्राग, अयोध्या—भारत के प्रसिद्ध तीर्थ और सास्कृतिक केन्द्र। प्राग = प्रयाग, तीर्थराज।

सगरो—सब।

घिनाई—घृणा से भर जाय।

मसि—कालिख। कलकित होने पर भी अभी तक बनी हुई है।

पंचनद—पजाब, जहाँ ऐसी अनेक लड़ाइयाँ लडी गई जिनमे भारतवासियों को पराजित होकर दासत्व की शृखला मे बधना पडा।

पानीपत—पजाब मे एक स्थान जहाँ तीन प्रसिद्ध युद्ध हुए—१५२६ (बाबर की विजय), १५५६ (पठान-वश का अत), और १७६१ (अहमद शाह द्वारा मराठो की पराजय)। इतने बुरे-बुरे दिन देखने पर भी पानीपत बना हुआ है।

चितौर—महाराणा प्रताप का नगर जहाँ स्वतत्रता के अनेक असफल युद्ध लडे गए।

बारानसि—वाराणसि, बनारस। भारत का सास्कृतिक केन्द्र।

अग्रवन—'वनस्य वृन्दावनस्याग्रम् इति।' आगरे का पूर्वतन नाम।

तीरथराजा—प्रयाग।

सरजू—अयोध्या की पवित्र नदी।

अवधतट—अयोध्या के पास।

तरल तरंगा—प्रवाहपूर्ण लहरे।

रासी—राशि, ढेर।

बोरहु—डुबा दो।

मथुरा—भारत का प्राचीन सास्कृतिक केन्द्र।

कासी—भारत का प्राचीन सास्कृतिक केन्द्र।

कुस—महाराज कुश द्वारा बसाई गई कुशावती नगरी।

कन्नौज—प्राचीन सास्कृतिक और ऐतिहासिक केन्द्र।

अंग—भागलपुर के आसपास का प्रदेश जिसकी राजधानी चपापुरी थी।

बंग—बगाल।

करक—टीस।

अस्थान—स्थान।

बिसरे—भूल गए।

भरत भुव—भरत की पृथ्वी, भारतवर्ष।

बिंध्य—विध्याचल।

लय—नष्ट, एक दूसरे मे मिलना।

अपजस—अपयश, कलक।

हाय पंचनद...भारत भमि कलंका—भारतके प्राचीन प्रसिद्ध महान् नगरो को देखकर भारतेन्दु को अत्यन्त क्षोभ होता है। अपने अस्तित्व द्वारा वे भारत की अधोगति की कहानी सुनाते है। भारतेन्दु ऐसे स्थलो का नष्ट हो जाना ही अच्छा समझते है। न दिखाई पडेगे, न दुःख होगा।

बल भारे—बल से गर्वीले।

हे—थे।

चंड दापै—प्रचंड दर्प या शक्ति।

चेरे—दास।

कृष्ण-बरन—काले।

बरन—वर्ण।

सुछंद—सुंदर छद।

धारि स्वाद—स्वाद या रुचि धारण कर।

नारद—पौराणिक परम भक्त जिनकी वीणा का सम्मोहन स्वर प्रसिद्ध है।

तानसेन—अकबर बादशाह के समय का एक प्रसिद्ध गवैया।

हुंकृति—ललकार।

लेत रहे—ग्रहण किए हुए थे।

खेत—रणक्षेत्र।

रन बाजन—रणवाद्य।

संक—भय, डर।

हीरक—हीरा।

काव्य ... परकास—अर्थात् साहित्यिक विकास। हमारे यहाँ वाल्मीकि को आदि कवि माना जाता है।

जाबाली—कश्यप वशीय एक ऋषि जो गौतम और महाराज दशरथ के गुरु थे।

जैमिनि—पूर्व मीमासा के प्रवर्त्तक एक ऋषि जो व्यास जी के ४ मुख्य शिष्यो में से एक थे।

गर्ग—एक प्राचीन ज्योतिर्विद जिनका 'गर्गसहिता' नामक ग्रन्थ प्रसिद्ध है। उन्होने शेषजी से विद्या सीखी थी और कृष्ण-बलराम का नामकरण किया था। प्रसिद्ध गार्गी इन्ही की पुत्री थी।

पातंजलि—पतजलि। एक प्रसिद्ध वैयाकरण जिन्होने ई० पू० द्वितीय शती मे पाणिनीय सूत्रो और कात्यायन कृत उनके वार्तिक पर महाभाष्य लिखा।

सुकदेव—महर्षि कृष्ण द्वैपायन वेदव्यास के पुत्र तथा ब्रह्मज्ञानी और परीक्षित को भागवत की कथा सुनानेवाले।

भुवदेव—पृथ्वी के देवता या महान् पुरुष।

कृष्ण मुनि व्यास—कृष्ण द्वैपायन व्यास।

भारत-गान—जिसे हम महाभारत कहते है वह पहले भारत नाम से प्रसिद्ध

था और व्यास उसके कर्ता थे। भारत का वृहदाकार ही महाभारत कहा जाता है।

कपिल—साख्य-दर्शन के आचार्य और कर्दम ऋषि तथा देवहूती के पुत्र। वे ईश्वर के अवतार माने जाते है। गगासागर सगम पर उनका आश्रम था।

सूत—पुराण-वक्ता है।

दुर्वासा—अत्रि ऋषि और अनुसूया के अत्यन्त क्रोधी पुत्र। इन्द्र को शाप दिया, और अबरीष तथा शकुतला की कथा मे आते है।

भृगु—ब्रह्मा के पुत्र तथा अत्यन्त तपस्वी ऋषि। उन्होने विष्णु की छाती मे लात मारकर उन्हे श्रेष्ठ सिद्ध किया।

तृषा—इच्छा, अभिलाषा, लालच।

अवनीस—राजे-महाराजे।

वही वासना. . .विलास—अर्थात् वे ही भारतवासी जिनमे प्राचीन सस्कार, ज्ञान, उद्देश्य, और आकाक्षाएँ थी आज पतितावस्था मे है।

अतिसूर—अत्यन्त वीर।

बुध—बुद्धिमान, विद्वान्।

मोहनिद्रा—अज्ञान या भ्रम की निद्रा।

जूते . .लगवाता है—दरिद्रता या निर्धनता का निशानी।

हाथी पर सवार—राज्यशक्ति और महिमा का प्रतीक।

बनबन की. . . फिरते है—मारे-मारे फिरते है, उजड गए है।

नाम लेवा पानी देवा न रहा—वश नष्ट हो गया।

पूत—पुत्र।

दिया बालन वाला—वशज।

वाल्मीकि—रामायण के रचयिता और आदि कवि।

कालिदास—प्रसिद्ध नाटककार जिन्होने 'मेघदूत', 'अभिज्ञान शाकुतल', 'रघुवश' आदि काव्य-ग्रन्थो और नाटको की रचना की जिनसे भारत का मुख आज भी उज्ज्वल है।

पाणिनि—प्रसिद्ध वैयाकरण जिन्होंने ईसा से प्रायः तीन-चार सौ वर्ष पूर्व 'अष्टाध्यायी' नामक प्रसिद्ध व्याकरण ग्रथ की रचना की।

बाणभट्ट—प्रसिद्ध 'हर्षचरित' के रचयिता।

चन्द्रगुप्त—मौर्य साम्राज्य के सस्थापक और चाणक्य के शिष्य। उन्होने ग्रीक आदि विदेशी आक्रमणकारियो को भारत से मार भगाया था।

अशोक—चद्रगुप्त के पौत्र महान् सम्राट् अशोक प्रियदर्शी (ई० पू० तीसरी शती)। उन्होने अफगानिस्तान तक अपना साम्राज्य स्थापित किया। उनके शिलालेख प्रसिद्ध है।

रूम—रोम।

नल—निषेध देश के चन्द्रवशी राजा वीरसेन के पुत्र। विदर्भ देश के राजा भीम की कन्या दमयती के साथ उनका विवाह हुआ था। नल और दमयती घोर कष्ट सहन करने के लिए प्रसिद्ध है।

रंतिदेव—एक प्रसिद्ध पौराणिक दानी राजा जिन्होने बहुत अधिक यज्ञ किए थे। एक बार सब कुछ दे डालने पर उन्हे ४८ दिनो तक पीने को जल भी न मिला। उनचासवे दिन वे कुछ खाने-पीने का आयोजन कर रहे थे कि क्रम से एक ब्राह्मण, एक शूद्र और कुत्ते को लिए हुए एक अतिथि आ पहुँचे। सब सामान उन्हीके आतिथ्य मे समाप्त हो गया; केवल जल बच रहा। उसे पीने के लिए ज्यो ही उन्होने हाथ उठाया कि एक प्यासा चाडाल आ गया और पीने के लिए जल माँगने लगा। राजा ने वह जल भी दे दिया। अत मे भगवान् ने प्रसन्न होकर उन्हें मोक्ष दिया।

शिवि—राजा उशीनर के पुत्र तथा ययाति के दौहित्र एक राजा जो अपनी दानशीलता के लिए प्रसिद्ध है। धर्म रूपी कबूतर की रक्षा के लिए अपने प्राण तक देने को प्रस्तुत हो गए थे।

विद्या का. . .प्यारे जागो—अँगरेज अपने साथ ज्ञान-विज्ञान, वैज्ञानिक आविष्कार, नवीन शासन-प्रणाली, नई कारीगरी और कला लाए थे। भारतवासियो ने उनसे यदि लाभ न उठाया और अध-परपराओ और अध-विश्वासो मे ही लिप्त पडे रहे तो फिर उनके लिए कोई आशा नही है। अँगरेजी राज्य मे जीवन का पुनर्सस्कार करने का बड़ा अच्छा अवसर प्राप्त हुआ था। दे० भारतेन्दु कृत 'हिन्दी-भाषा की उन्नति पर व्याख्यान'।

ज्वर चढ़ा है—विकार-ग्रस्त होने का चिह्न है, भारतीय जीवन स्वस्थ नही है।

विक्टोरिया—(१८१९–१९०१)—विलियम चतुर्थ की मृत्यु पर १८३७ मे गद्दी पर बैठी और १८४० मे एलबर्ट से विवाह किया। १८५७ मे घोषणा-पत्र, १८७६ मे भारत-सम्राज्ञी, १८९७ मे हीरक-जुबिली।

हे भगवती...पकड़ो—भारतेन्दु महारानी विक्टोरिया से भारत को सहारा देने की विनय करते है, अर्थात वे उसे स्वस्थ बनाने मे, उन्नति-पथ की ओर ले जाने मे सहायक हो और डूबने से बचावे। भारतेन्दु का विक्टोरिया के प्रति क्या दृष्टिकोण था, इसका पहले उल्लेख हो चुका है।

क्लैव्य—नपुसकत्व, कायरता, डरपोकपन।

अधीरजपना—धैर्यहीनता।

हे सर्व्वांतर्यामी...निवास हो—यहाँ फिर से भारतोदय की आकाक्षा प्रकट की गई है—उस समय नही तो भविष्य मे।

ललककर—उमॅग कर।

ललककर नही मिलते—अर्थात् अभी भारतोदय का समय नही आया।

मै ऐसा हो...बस यह लो—यहाँ भारत भाग्य कटार का छाती मे आघात कर गिर जाता है, किन्तु उसकी आकाक्षा यही है 'हे सर्व्वातर्यामी.... ....मेरा निवास हो।' इससे यही प्रकट होता है कि भारतेन्दु को अपने समय की भारतीय दशा को देखकर घोर निराशा अवश्य हुई थी, किन्तु भविष्य के लिए वे बिल्कुल आशाहीन नही थे।